अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ■ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ■ एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–१९ ■ राजघाट, काशी ■ शुक्रवार, ८ फरवरी, '५७

सर्वोदय के लिए वोट !

कम-से-कम सौ मनुष्यों के पीछे एक मनुष्य की एक गुण्डी के हिसाब से सूतांजलि मिलनी चाहिए। इस हिसाब से भारत भर से ३६ लाख गुंडियाँ मिलेंगी। यह बिल्कुल ही छोटी चीज है। लेकिन जितनी छोटी है, उतनी ही शक्तिशाली है। हर एक मनुष्य को इसमें शरीर-परिश्रम की, अहिंसा की, प्रेम की और त्याग की दीक्षा मिलती है। इतनी सारी विविध दीक्षाएँ एक छोटी-सी गुण्डी से सिद्ध होती हैं। सर्वोदय के लिए कितने वोट हैं; इसका अंदाजा भी हमको उससे लगता है। इसलिए १२ फरवरी को सूतांजलि का समर्पण हर जगह हो।

जब मैं सूत की गुण्डी देखता हूँ, तो उसमें गांधीजी का जितना अनूठा रूप दीख पड़ता है, उतना और कहीं नहीं देखा है। इसलिए मेरा कहना है कि सब लोग यह काम करें और केवल श्रम-दान पर यह आंदोलन चल सकता है, यह सिद्ध करें। श्रम-दान का सर्वोदयी और सर्वसुलभ प्रकार यह सूत्रांजलि है।

—विनोबा

सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै !

(विनोबा)

थोड़े दिन में काँग्रेसवाले वोट माँगने आयेंगे। वे कहेंगे–"हमने याने सरकार ने पाँच साल में इतना अच्छा काम किया है, इसलिए हमको फिर से चुन कर दो।" सरकार के जरिये उन्होंने जो काम किये, उसके आधार से वे वोट मांगेंगे। दूसरा पक्षवाला अपने लिए वोट मांगेगा और कहेगा–"आज जो सरकार है, उसने काम अच्छा नहीं किया है, इसलिए हमें चुन कर सरकार में भेजोगे, तो हम उत्तम राज्य चलायेंगे।" अब जनता को सिर्फ इतना ही काम करना है कि इसको या उसको चुन देना है ! चुन दिया और आपका काम खत्म हुआ ! फिर क्या-क्या करना है ? २६ जनवरी है, तो झंडा लगाओ, मिठाई खाओ ! परंतु योजना करने वालों का कसूर यह है कि सब लोग तो मिठाई खा नहीं सकते ! ऐसा कसूर धर्म-कार्य करने वाले मठ-मंदिर नहीं करते हैं ! वे कहते हैं कि फलाँ शिवरात्रि का व्रत सबको करना चाहिए। या कृष्णाष्टमी के दिन पर यही खाना चाहिए। इस तरह हर एक उत्सव का खाने के या फाके के साथ संबंध लगा देते हैं। फिर साल भर में दो-चार दिन ऐसा धर्म-कार्य कर दिया, तो बाकी धर्मकार्य मठ-मंदिर वाले देख लेंगे ! इस तरह १५ अगस्त, २६ जनवरी, महात्माजी की पुण्यतिथि आदि उत्सव भी दो-चार दिन मना लिये कि राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, आदि कुल कर्ज से उऋण हो गये ! बाकी जो कुछ करना है, वह सब स्टेट् अथवा मंदिर-मठ करेंगे !

परंतु इस योजना से सारा समाज पुरुषार्थहीन बन गया है। धर्म की तरफ से या देश की तरफ से कोई नयी तपस्या नहीं हो रही है। लोगों के पास सिर्फ खाना-पीना रह गया है। अगर संतोष है, तो इस बात का कि अच्छा खाना मिल रहा है। अगर शिकायत है, तो इस बात की कि खाना अच्छा नहीं मिल रहा है या चंद लोगों को ही ठीक मिल रहा है। संतोष भी खाने का, शिकायत भी खाने की। दूसरी कोई तृप्ति-अतृप्ति रही ही नहीं !

हिंदुस्तान में धर्म का अभिमान बहुत है। पर जहाँ अभिमान होता है, वहाँ प्रेम नहीं होता है। हमको धर्म के लिए प्रेम नहीं है, अभिमान है। निरंतर वासना में लिप्त और खाने-पीने के सिवा और कुछ काम न करने वाले लोग धर्म का क्या अभिमान रखते होंगे, यह मेरी समझ में नहीं आता। भोगासक्त समाज धर्म का क्या प्रेम रखेगा ? आज समाज बिलकुल निःसत्त्व हो गया है। बुजुर्गों के नाम पर लोग जी रहे हैं। जिंदगी भर में हम दो-तीन धर्म-कार्य या सेवा-कार्य करते हैं। बाक सब चुने हुए प्रतिनिधियों पर छोड़ देते हैं ! हम कहना चाहते हैं कि भारत की प्रतिष्ठा के लिए यह अत्यंत हानिकारक विचार है। कहा यह गया है : "सहनौ भुनक्तु, सहवीर्यं करवावह।"—'...हम सारे एकसाथ मिल कर पराक्रम करेंगे।'

"आपका प्रतिनिधि बन कर मैं करूँगा," ऐसा नहीं कहा है !!

वलंजीमन, तंजाऊर, २६-१-५७

तालुका-दान के लिए "तिरुमंगलम्" की प्रतिज्ञा !

"मदुराई ज़िले के तिरुमंगलम् तालुका के क़रीब सभी गाँवों के हम सब एकत्रित लोग आचार्य श्री विनोबाजी की प्रेरणा से और उनके मार्गदर्शन में इस देश में भारत के कल्याण के लिए जो भूदान-आंदोलन चल रहा है, उसकी महान् संभावनाओं में अपनी दृढ़ निष्ठा प्रगट करते हैं। हमारा विश्वास है कि इस आंदोलन की सफलता से ग्राम-राज्य की सच्ची नींव रखी जायेगी। हमारी राय है कि गांधीजी द्वारा प्रस्तुत रचनात्मक कार्य की परिपूर्णता ही इस भूदान-यज्ञ से हो रही है।

"हमें खुशी है और अभिमान भी है कि तमिलनाड में भूदान-आंदोलन ने ग्रामदान का विकसित रूप प्राप्त किया है और हमारे इस तालुके ने अब तक पचास गाँव भी ग्रामदान में भेंट कर दिये हैं। यह उचित ही है कि तालुका-दान की कल्पना इस तिरुमंगलम् तालुका में उदय पायी है और हम उस कल्पना को कार्यान्वित करने के लिए यहाँ आज एकत्रित हुए हैं। परमेश्वर से हम प्रार्थना करते हैं कि हमारे प्रयत्नों को वे अपना आशीर्वाद प्रदान करे।

"हम आज यहाँ गंभीरतापूर्वक निश्चय करते हैं और प्रतिज्ञा लेते हैं कि आज से भविष्य में हम सब एक-हृदय होकर अपने भीतर जो भी शक्ति है, उसे एकत्र जुटा कर संपूर्ण सहयोगपूर्वक, हमारा संपूर्ण तिरुमंगलम् तालुका, आगामी तीन मास में आचार्य विनोबाजी को दान में समर्पित करेंगे।"

(इस संबंध में संपूण विवरण, इसी अंक क पृष्ठ ८ पर देखिये।—सं०)

हमें कहाँ पहुँचना है ?

····आज तो हम फौज और सभी प्रकार की भौतिक सामर्थ्य के सहारे चल रहे हैं। हमारे राजनीतिज्ञ पिछली दो-तीन पीढ़ियों से ब्रिटिश-सत्ता के दिनों से शस्त्रास्त्रों पर होने वाले भारी खर्चे के खिलाफ जोर-शोर से आवाज उठाते आये हैं; मगर अब, जब कि राजनैतिक गुलामी से हम मुक्त हो चुके हैं, हमारा फौजी खर्च बढ़ गया है और वह इससे भी अधिक बढ़ जाने का डर है। तिस पर तुर्रा यह कि हमें इस बात पर गर्व है। हमारी विधान-सभाओं में इसके खिलाफ एक भी आवाज नहीं उठती। इस प्रकार हमारे लोगों पर एक प्रकार का पागलपन सवार हो गया है और पश्चिमी दुनिया की चमकदार बनावटी बातों का अनुकरण करने की व्यर्थ चेष्टा हमारे यहाँ हो रही है। मगर इसके बावजूद, मेरे तथा अन्य कई लोगों के मन में, यह आशा अभी घर किये बैठी है कि हिन्दुस्तान इस काक-नृत्य से उबर आयेगा और सन् १९१५ से लगातार ३२ बरस तक उसे अहिंसा की जो शिक्षा मिली है, फिर भले ही वह चाहे जितनी अपूर्ण क्यों न हो, उसके फलस्वरूप उसे जिस नैतिक ऊँचाई तक पहुँच जाना चाहिए, वहाँ तक वह पहुँच सकेगा।

१९-११-'४७। "निधि-समाचार" से।

—गांधीजी

---

www.vinoba.in

मूल्य-परिवर्तन की क्रांति और छात्र : २.

(जयप्रकाश नारायण)

विद्यार्थी-समाज में हम ऐसा विचार पैदा कर सकते हैं कि भाई, ठीक है, ये राज्यवाले जो करते हैं, करें और ठीक ढंग से करें, तो अच्छी बात है। अगर वे गलत ढंग से करते हैं, तो हम उनकी गलती का विरोध भी करें। –हाँ, कोई शीशे वगैरह न फोड़ दें, न दूकानों में और बसों में आग लगा दें।– लेकिन कानून द्वारा या राज्य-शक्ति द्वारा समाज को आगे नहीं ले जाया जा सकेगा, यह हम ठीक से समझा दें। मेरा खयाल है कि विद्यार्थियों में कम्यूनिज्म या सोशलिज्म के लिए जो आस्था थी, वह आज कम है, वह आकर्षण कम हो गया है याने पहले जितना नहीं है। अब इसकी जगह पर उनके सामने कोई नयी चीज रखी जाय, तो उसको वे ग्रहण करेंगे। मेरा अपना अनुभव ऐसा है कि जब विद्यार्थी-समाज में यह विचार हमने रखा, तो देखा कि वे इसको समझना चाहते हैं। उनकी रुचि भी होती है और हम लोगों के भाषण के बाद वहाँ कोई स्थानीय कार्यकर्ता, उनके कोई अध्यापक या नागरिक हों, जो उनसे कुछ संपर्क रखें और यह विचार उनको समझा दें, तो अगर हमारी सभा में ५००-१००० विद्यार्थी इकट्ठे हुए, तो हो सकता है कि इस स्वाध्याय-मंडल में ५०-६० विद्यार्थी तो नियमित रूप से वहाँ आवें। ऐसा आज से दस वर्ष पहले नहीं था। तब विद्यार्थियों के लिए दूसरे आकर्षण थे। आज अहिंसा की बातें लोगों के सामने रखी जायँ, तो इसकी एक अनुकूलता भी है, क्योंकि हिंसा के ये जो शस्त्र पैदा हुए हैं, सब लोग समझते हैं कि ये तो सारी दुनिया को मिटा देंगे। तो, यह एक अच्छा वातावरण बना है, जिससे हम फ़ायदा उठा सकते हैं। एक कार्यक्रम हम रखें और खास करके सन् '५७ के संदर्भ में रखें। विद्यार्थी अपने को क्रांतिकारी और इन्कलाबी कहते हैं और वे हैं। अगर हमारे नवयुवक परिवर्तन नहीं करना चाहें, तो समाज बदलेगा कैसे? जो नयी पीढ़ी हो, उसमें विद्रोह और क्रांति की भावना अवश्य होनी चाहिए। नहीं तो विकास ही नहीं होगा। समाज में कंजरवेटिज्म नहीं रहे, तो भी समाज नहीं चलेगा। हर कोई जो आज करता है, वह कल दूसरा करे, तीसरा करे, तो कोई स्थिरता ही समाज में नहीं रहेगी। पर दोनों शक्तियों को साथ-साथ चलना है। आज के कम्यूनिस्ट लोग कंजरवेटिव हो गये हैं। रूस के और रूसवादी जितने कम्यूनिस्ट हैं, वे कंजरवेटिव हो गये हैं। उनके सामने एकदम कोई सीधा प्रश्न रख दिया जाय, जैसा मैंने भारत के कम्यूनिस्टों के सामने प्रश्न रख दिया तो अजय घोष ने उसका सीधा मुकाबला नहीं किया। वे सोचने से घबराते हैं कि सोचेंगे तो उनकी जो मान्यताएँ हैं, उनको छोड़ना पड़ेगा। तो कल के रिवोलूशनरीज आज के कंजरवेटिव हो जाते हैं। यह तो इतिहास का एक बहुत बड़ा 'एलीमेंटरी' सबक है। अतः विद्यार्थी समुदाय को समझा कर उनमें जो क्रांतिकारिता या परिवर्तन के लिए जो प्रेरणा है, उसको हम सही रास्ते पर मोड़ सकते हैं। हम कह सकते हैं कि भाई, 'क्रांति-क्रांति' करते हो, तो चलो। यह सन् '५७ क्रांति का वर्ष है, क्रांति का युग है, आ जाओ इसमें, अगर क्रांति करना चाहते हो तो। एक नारा हम दे सकते हैं कि भाई एक वर्ष के लिए पढ़ना-लिखना सब छोड़ दो, एक वर्ष स्कूल-कालेज बंद हो जायँ। पहले तो मैं छोटे-छोटे बच्चों के लिए क्रांति का कोई कार्यक्रम मानता नहीं था। लेकिन उस दिन विमलाबहन से बच्चों की पदयात्रा की कहानी सुनी। बहुत प्रेरणादायक है, वह कहानी*। इसलिए क्रांति का एक कार्यक्रम हमको इस वर्ष सभी विद्यार्थियों के सामने रखना चाहिए।

इस भूदान-आंदोलन का समर्थन पंडित जवाहरलालजी ने भी किया है, काँग्रेस-पक्ष ने भी किया है और बहुत से मुख्य मंत्रियों ने और दूसरे मंत्रियों ने किया है। मैं नहीं कह सकता कि विश्व-विद्यालयों के जो कुलपति हैं, उनमें से कितने लोगों ने इसका स्वागत किया है; क्योंकि वे लोग ज़रा कंजरवेटिव लोग होते हैं। इसलिए विद्यार्थियों की श्रद्धा वे आज प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। शिक्षक-विद्यार्थी के दो-दो ट्रेड यूनियन्स बन गये हैं। उन दोनों में टक्कर होती है। मालिक और मजदूर का-सा रिश्ता पैदा हुआ है। नहीं तो 'विद्यार्थी इन टर्म्स आफ स्ट्राइक' सोचता ही नहीं। लेकिन जिन लोगों ने इसका समर्थन किया है और जो इसको समझते हैं कि नैतिक क्रांति ही मानव-समाज को बचा सकती है, नैतिक क्रांति के सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं है, उनके पास हम जायँ। पंडितजी ने भी भूदान के बारे में काफी गहराई में जाकर बात कही है। हम तो यह भी अपेक्षा रखते हैं कि वे लोग स्वयं कहें कि भाई, हमारे विद्यालय एक वर्ष तक बंद होंगे। वे खुद बंद करें और कहें कि हम बंद कर देते हैं। विद्यार्थी जागेंगे, क्रांति के इस काम में लगेंगे। मान लीजिये कि आज लड़ाई हो जाय, हिंदुस्तान और किसी दूसरे देश के बीच में, तो लड़ाई में जाने वाली उम्र के जितने विद्यार्थी हैं, जायेंगे या नहीं? आज भी योरप में लड़ाई हो जाती है, तो ऑक्सफोर्ड-केंब्रिज के विद्यार्थी जाते हैं या नहीं? करीब-करीब सब बंद हो जाता है। यह लड़ाई से बड़ी चीज हो रही है। अपने देश में एक वर्ष के अंदर इतना बड़ा काम अगर हो जाता है, तो इस देश का जो नैतिक और सामाजिक जीवन है, वह कितना ही ऊँचा उठ जाता है। और यही काम अगर तलवार से किया जाय, तो गाँव-गाँव में आग लगे और तेलंगाना सारा भारत बने। इसमें से क्या निष्पन्न होगा? या कानून से सब बाँट दिया जाय, तो उसमें से क्या निष्पन्न होगा? लेकिन ऐसा हो कि विद्यार्थी घूम रहे हैं, नारे लगा रहे हैं, गीत गा रहे हैं और न किसीके घर में हैं, बल्कि पेड़ के नीचे सो जाते हैं, मिट्टी खोद लेते हैं और कुछ अपना खा लेते हैं और चलते हैं तथा विचार दे रहे हैं-चारों तरफ। और कहीं बैठ करके जमीन बाँट रहे हैं, ऐसा नहीं, बल्कि अपनी बात समझाते चले जा रहे हैं, देश भर में एक तूफान उठा है और विद्यार्थी घूम रहे हैं। अब इसमें से जो निष्पन्न हो और उसके बाद अगर विद्यार्थी, जिन विद्यालयों का मोह उनमें रह भी जाय, तो उसके बाद, विद्यालयों में आवें भी, तो एक वर्ष में उनका कितना परिवर्तन हो जायगा? कहाँ से कहाँ चले जायँगे? वही विद्या, जो वे पढ़ते हैं, वह किन नजरों से, किन कानों से वे सुनने लगेंगे और देखने लगेंगे? सारी दृष्टि उनकी बदल जायगी, उस एक वर्ष में। इस नीति के चलते देश का लाभ होगा, विधायक शक्ति पैदा होगी।

हम इंटर साईंस में पढ़ते थे। स्कॉलरशिप भी हमको मिलती थी। पटना कालेज उस वक्त साइंस कालेज था और न्यू कालेज इधर बना था। अच्छे विद्यार्थियों में हम लोग गिने जाते थे। पर सब इम्तहान वगैरह भूल-भाल करके चले आये। हम लोगों ने यह नहीं कहा कि भाई, बीस दिन की परीक्षा रही है, बीस दिन में पास कर लो। मौलाना ने कहा कि भाई, संखिया की डली तुम चूस रहे हो-इसलिए कि तुमको दूध का गिलास नहीं मिल रहा है। तुम्हारे लिए कोई राष्ट्रीय विद्यालय नहीं है, क्या इसीलिए तुम जहर पीते रहोगे? यह क्या बात है? तो हम लोगों ने निश्चय किया कि अच्छा भाई जहर छोड़ दो, फेंको इसको और इम्तहान देने के लिए बीस दिन भी नहीं रुके हम लोग। उन लोगों में से कुछ लोग कुछ दिनों के बाद गये भी वापस, कुछ नहीं भी। पर लगता है, वह महात्मा गांधीजी का एक स्लोगन देना दूसरी बात थी और हम लोग उस तरह से कहें तो वह दूसरी बात होगी। विनोबाजी आज इस बात को कहें, तो इसमें कहीं अधिक शक्ति होगी। विद्यार्थियों के लिए आज एक साल की माँग हम कर सकते हैं कि साल भर आप अपना इस क्रांति के लिए दो, ताकि '५७ के अन्त तक गाँव-गाँव में जमीन का बँटवारा गाँव के ही लोगों के हाथों से हो जाय, कोई भी भूमिहीन न रह जाय। देहातों में बहुत चर्चा है कि '५७ में उलट-फेर होगा। क्या होगा, कोई ठीक-ठीक नहीं जानता है। लेकिन कुछ होगा, एक ऐसा खयाल '५७ के बारे में फैला है। तो सारे विचार की भूमिका में इस विचार की ओर आप संकेत करें और आप समझें-बूझें, दूसरों को समझायें, इस विचार को फैलायें, इस विचार के अनुसार विद्यार्थी का अपना जीवन-परिवर्तन हो और पहला कदम उसमें यह हो कि विद्यार्थी सम्पत्तिदान करें, मिल का कपड़ा भी पहनता है, तो पहने, पर फिर बाद में धीरे-धीरे खादी की तरफ जायगा वह। लेकिन आज यह हो कि "इस विचार को मानते हो क्या? समाज के तुम अंग हो और समाज तुमको पढ़ा रहा है, समाज तुमको दे रहा। तुम्हारा कर्तव्य है, इस चीज को समझ लेने का और उस पर आचरण करने का। आचरण करने का एक तरीका हम तुमको बताते हैं।" हम समझते हैं कि चारों तरफ से एक वर्ष विद्यार्थी दें, यह आवाज आवे, तो कोई असम्भव बात नहीं है। हममें कोई मौलाना आजाद की तरह से अपनी वाणी से आग लगाने वाला न भी हो, तो भी जमाना हमारे साथ है, अतः यह हो सकता है। (समाप्त)

विद्यार्थियों के बीच, उद्घाटन-भाषण,
खादीग्राम, २८-१२-'५६

---

* भूदान-यज्ञ, ता० ४ जनवरी '५७

www.vinoba.in

"तो फिर कार्यकर्ता क्या करें ?"

पू० दादा,

" सर्व-सेवा-संघ के क्रान्तिकारी निर्णय (तंत्रमुक्ति और निधिमुक्ति) पर तभी से चिंतन चल रहा था। यदि १९५७ के आरंभ से इस आन्दोलन को जन-आधारित बनना है—अर्थात् खुद जनता ही जमीन प्राप्त करे और ज़मीन बाँटे—तो फिर हम सत्याग्रही लोकसेवकों का काम क्या रह जायेगा ? केवल मुक्त-विचार-प्रचार के अतिरिक्त और कुछ विशेष कार्य समझ में नहीं आता।

"भूदान-यज्ञ"के ४ जनवरी ५७के अंक में प्रो० बंग का "१९५७ की व्यूह-रचना" लेख जब मैंने पढ़ा, तो उसमें भी मैंने यही पाया।

"यदि हम लोकसेवकों का काम केवल 'मुक्त-विचार-प्रचार,' साहित्य प्रचार एवं साहित्य-बिक्री ही है, अर्थात् वचनात्मक काम ही करना है, जैसा कि हमारे कम्युनिस्ट मित्र भी करते चले आ रहे हैं, तो हममें और कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं में, जो केवल वचनात्मक ही काम करते हैं, क्या अन्तर है ? वे भी जनता को तथा नौजवानों को भविष्य में होने वाली अपनी दुनिया का ख्वाब बतलाते हैं और अब हम लोग भी उन्हींकी तरह जनता एवं नवयुवकों को सर्वोदय-समाज-रचना के स्वप्न को बतलायेंगे। वे भी स्वयं कुछ नहीं करते; केवल किसान-मजदूरों से करने के लिए कहते हैं और अब हम लोग भी किसान-मजदूरों से करने के लिए कहेंगे; करेंगे कुछ नहीं। ऐसी हालत में हम लोक-सेवक अपने को रचनात्मक कैसे कह सकेंगे ? यह शंका मन में चल रही है। अभी तक उसका निराकरण नहीं हुआ।

"अपने विचारों से हम लोक-सेवकों का मार्गदर्शन आप करें, इसी ख्याल से यह शंका लिख कर आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

आपका सेवक,
धौरहरा, बनारस, २०-१-५७ कन्हैया के विनम्र प्रणाम"

भाई कन्हैयाजी,

आपका कृपापत्र मिला। धन्यवाद।

शुरू में एक बात साफ कर दूँ। मैं यह नहीं मानता कि कम्युनिस्ट निरे बातूनी होते हैं। मैंने अक्सर यह देखा है कि उन लोगों में बड़े त्यागी और क्रियावान् तथा पुरुषार्थवान् व्यक्ति होते हैं। वे किसान-मजदूर और दूसरे संपत्तिहीन वर्गों के असंतोष को संगठित करते हैं और लोकक्षोभ का अपने प्रयोजन के लिए स्फोट कराने की कोशिश करते हैं। उनकी अपनी एक प्रक्रिया है।

हमारी प्रक्रिया बिलकुल भिन्न है। हम विधायक जनशक्ति को जगाना चाहते हैं। हमारा विश्वास व्यक्तिगत और सामुदायिक आत्मबल में है। इसलिए हमारी प्रक्रिया विकेंद्रित रूप से काम करती है। असल में तंत्रमुक्ति का यही आशय है। अहिंसक प्रक्रिया में स्वयं आचरण करना होता है और दूसरों को आचरण के लिए प्रेरित करना होता है। इस प्रक्रिया में हमारा आधार दूसरों से कराने पर नहीं होता, उनको समझाने पर होता है। समझाने-बुझाने की प्रक्रिया का नाम ही विचार-प्रचार है। यह केवल वाचिक कार्यक्रम नहीं है। अहिंसक क्रांति, वैचारिक क्रांति है। इसलिए उसका मुख्य साधन भी आचार और उच्चार द्वारा विचारों का प्रतिपादन है। जिस कार्यकर्ता ने संपत्ति और स्वामित्व छोड़ने का संकल्प कर लिया हो और संग्रह की भावना त्याग दी हो, उसके विचार-प्रतिपादन को हम केवल शाब्दिक कार्यक्रम कैसे कह सकते हैं ?

हमारे लिए सिर्फ साहित्य-प्रचार और विचार-प्रचार का ही काम बाकी नहीं रह जायेगा। जगह-जगह भूमि-प्राप्ति तथा भूमि-वितरण के आयोजन हमको ही करने होंगे या उन आयोजनों में स्थानीय नागरिकों की मदद करनी होगी। भूमि-प्राप्ति और भूमि-वितरण के सारे प्रयत्न संपूर्ण रूप से अहिंसक रहें, इसकी सावधानी हमारा कार्यकर्ता नहीं रखेगा, तो और कौन रखेगा ? जहाँ पर लोकक्षोभ फट पड़ने का अंदेशा हो, वहाँ अपनी जान की बाजी लगा कर परिस्थिति को संभालने का पुरुषार्थ भी तो आप ही को करना पड़ेगा। क्या यह सब, बातों का जमा-खर्च है ? परिस्थिति को भड़काने के लिए पुरुषार्थ की जरूरत नहीं होती। उसके लिए तो जोश-खरोश काफी है। लेकिन परिस्थिति पर काबू पाने के लिए चारित्र्य और संयम की आवश्यकता रहती है। यही असली पुरुषार्थ है।

यदि सचमुच आप जैसा कहते हैं, उस तरह जनता स्वयं भूमि प्राप्त करने लगी और उसका वितरण करने लगी, तो क्या हमारे संतोष में कोई कसर रह जायगी ? सेवा के लिए अवसर न रहने पर जो व्यग्र और चिंतित हो जाता है, वह कार्यकर्ता क्या लोक-सेवक कहलाने का पात्र है ? सेवक को तो उस दिन का स्वागत करना चाहिए, जिस दिन सब अपना-अपना काम कर लेंगे और किसीको किसीकी सेवा का कायल नहीं रहना पड़ेगा। उस दिन सभी मानव समान भूमिका पर सहयोगी जीवन का दिव्य प्रसाद अनुभव करेंगे। वह जीवन वास्तविक साम्ययोगी जीवन होगा।

आपके लिए चिंता का अवसर नहीं है, उत्साह और आशा का प्रसंग है।

काशी, २५-१-'५७ विनीत
दादा धर्माधिकारी

सर्वोदय के लिए वोट दीजिये !

(सिद्धराज ढड्ढा)

थोड़े दिनों के बाद देश भर में आम चुनाव होने वाले हैं। भिन्न भिन्न राजनैतिक पार्टियों के लोग जनता के पास जाकर उनका वोट याने मत इस बात के लिए माँगेंगे कि उन्हें चुन कर शासन करने के लिए भेजा जाय, क्योंकि वे राजसत्ता याने कानून के जरिये लोगों की भलाई के काम करेंगे। अगर उन्हें शासन का मौका दिया जाय, तो वे क्या-क्या करेंगे, इसके बारे में भिन्न-भिन्न पार्टियों ने अपने घोषणा-पत्र भी निकाले हैं।

दुनिया की बात छोड़ दें, पर हिन्दुस्तान में हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि स्वराज्य के दस वर्ष बाद भी गरीबी का मसला हल नहीं हुआ है। राज-काज में लगे हुए लोगों ने कुछ उपाय करने की कोशिश की है, पर अनुभव यह आ रहा है कि उधर दवा हो रही है, इधर मर्ज़ बढ़ ही रहा है! और बातों को रहने दीजिये, सामुदायिक विकास-योजनाओं की ही बात लीजिये, जो गाँव के लिए ही बनी हैं और उनके तथा राष्ट्रीय विस्तार-सेवा-खण्डों के काम का मुख्य उद्देश्य भी यही माना गया है कि गाँव की तरक्की हो। ग्रामपंचायतों-संबंधी कानून भी इसी मकसद से बनाये जा रहे हैं। पर खुद सरकारी रिपोर्टों में यह बताया गया है कि इन सब चीजों का फायदा, गाँव में जो लोग पहले से थोड़े सम्पन्नया साधनों वाले हैं, वे ही उठा रहे हैं। इधर-उधर कुछ सड़कें, स्कूल वगैरा बन जाना दूसरी चीज है। पर इनसे गरीबी का मसला हल नहीं होता। गरीबी और बेकारी बढ़ती जा रही है, क्योंकि ऊपर बताये अनुसार सरकारी योजनाओं आदि की संजीवनी पाकर तो गाँवों के छोटे-छोटे सम्पन्न लोगों की भी शोषण करने की ताकत बढ़ रही है।

साफ़ जाहिर है कि गरीबी-अमीरी का भेदभाव या शोषण व अन्याय जैसे बुनियादी मसले राज्य की याने कानून की ताकत से हल नहीं हो सकते। कुछ हद तक वे हल होते नजर आयेंगे, तब भी इस प्रक्रिया में राज्य की ही ताकत बढ़ेगी, लोगों की नहीं। कुल मिला कर लोग राज्य के अधिकाधिक मुहताज बनेंगे। समाज में बुनियादी रद्दोबदल तभी संभव है, जब लोगों के विचारों में तबदीली हो और वे अपने मसले खुद हल करने की दिशा में आगे बढ़ें। तभी सर्वोदय यानी सबका उदय और सबका भला होना संभव है, वरना कुछ का तो भला होता रहेगा, पर शेष सब लोग मुहताज और परावलम्बी ही बने रहेंगे।

अतः अगर हम सर्वोदय चाहते हैं, तो हमें सर्वोदय के लिए वोट देना चाहिए। पर लोग पूछेंगे कि सर्वोदय वालों की कौनसी पार्टी है ? किसे वोट दें ? सर्वोदयवाले तो चुनाव में भी खड़े नहीं होते। हम देख चुके हैं कि सर्वोदय राजसत्ता के जरिये संभव नहीं है, वह लोकसत्ता यानी लोगों की अपनी ताकत और पहल से ही हो सकता है। इसलिए सर्वोदय में जिनकी आस्था है, ऐसे लोगों को राजसत्ता की होड़ से वास्ता नहीं है। इसीलिए वे आम चुनावों में शासन के लिए उम्मीदवार बन कर लोगों के सामने नहीं आयेंगे। पर सर्वोदय के लिए वोट देने का तरीका यह है कि हर शख्स खुद सर्वोदय के लिए कुछ कदम बढ़ाये, क्योंकि सर्वोदय तो लोगों के करने से ही होगा, किसीको वोट देकर उसके जरिये काम कराने से नहीं होगा। हम सर्वोदय चाहते हैं, तो ऊपर-ऊपर के सुधार से काम नहीं चलेगा। हमें समाज की बुनियादें बदलनी पड़ेंगी। हर छोटे-बड़े के दिल में आज जो स्वार्थ और खुदी घुस गयी है, उसे निकालना होगा। सबके भले में हमारा भला है, हमारा पड़ोसी हमारा भाई है, यह समझ कर सुख-दुख, अमीरी-गरीबी, जो कुछ भी है, वह आपस में बाँट लेनी होगी। दूसरों के शोषण पर हम जिन्दा नहीं रहना चाहते

www.vinoba.in

हों, तो हममें से जो आज ऐसा कर रहे हैं, उन्हें शरीर-श्रम को अपनाना होगा। अतः अपना वोट सर्वोदय को देने का मतलब किसी दूसरे को चुन कर उसके हाथ में अपने भाग्य का फैसला दे देने से नहीं है, बल्कि वह वोट खुद अपने आपको देना है, यानी सर्वोदय के काम को आगे बढ़ाने के लिए खुद कुछ करना है।

सर्वोदय का यह रास्ता गांधीजी ने हमें बताया था। इसीलिए रचनात्मक काम पर उन्होंने इतना जोर दिया था। सर्वोदय को वोट देने के मानी यह जाहिर करने के हैं कि हमें सर्वोदय में विश्वास है। इसके कई तरीके हैं। विनोबाजी ने दो सहज-सुलभ तरीके हमारे सामने रखे हैं—एक नित्य, दूसरा नैमित्तिक। सर्वोदय-मंत्र के द्रष्टा गांधीजी थे। इसलिए हर साल १२ फरवरी को, जो उनके अस्थि-विसर्जन का दिन है, हर स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़ा शोषण का अन्त करके भाईचारा कायम करने की निशानी के तौर पर अपने हाथ से कते हुए सूत की एक गुण्डी समर्पण करे। यह सर्वोदय को वोट देने का एक तरीका है। दूसरा तरीका यह है कि हर शख्स उसके पास जो कुछ है और जिसे वह आज अपना और अपने ही स्वार्थ की पूर्ति का साधन मानता है, उसमें से कुछ समाज के लिए दे। जमीन है तो जमीन दे, अपनी आमदनी में से संपत्तिदान दे या श्रम-दान दे। अगर जनता की अपनी ताकत से सर्वोदय लाना है–और हमने देखा कि दूसरे किसी तरीके से सर्वोदय आ नहीं सकता–तो उसके लिए हर व्यक्ति द्वारा देने की वृत्ति अपनाना जरूरी है। आज हर व्यक्ति यह मानता है कि जितना हो सके, उतना समाज से लेना या छीन लेना जायज़ है, यह उसका हक है। इसी "लेने" की वृत्ति के बजाय "देने" की वृत्ति समाज में पैदा होना जरूरी है। राज की ताकत के जरिये यानी जबरदस्ती से या कानून से समाज में भाईचारा कायम करने और समता लाने की कोशिशें होती रही हैं और आज भी कई मुल्कों में वे हो रही हैं। पर जैसा कि ऊपर बताया गया है, इस तरह की कोशिशों का नतीजा हमेशा यह होता है कि एक तरह की असमानता मिट कर दूसरी तरह की असमानता और शोषण उसकी जगह ले लेता है, क्योंकि वह परिवर्तन जनता की अपनी ताकत से या समझ-बूझ से नहीं होता है, बल्कि ऊपर के दबाव से होता है। इससे जनता की ताकत कभी नहीं बढ़ती, बल्कि उत्तरोत्तर कम होती जाती है और जो उसको एक प्रकार के अन्याय से बचाते हैं, वे ही लोग सत्ता पाकर जनता की असहायता और मुहताजी का फायदा उठा कर, खुद शोषक और अत्याचारी बन जाते हैं। इसलिए सच्चा सर्वोदय तभी हो सकता है, जब खुद जनता समझ-बूझ कर अपनी वृत्ति में परिवर्तन करे। इस परिवर्तन को सहज रूप देने के लिए विनोबाजी ने भूदान, संपत्तिदान, श्रमदान आदि की परम्परा चलायी है। यह भी समझ लेना चाहिए कि ये दान कोई खैरात नहीं हैं, बल्कि इस बात की निशानी है कि हमारे पास जो कुछ है, वह आखिरकार समाज का ही है और उसका उपभोग समाज के लिए ही होना चाहिए। 'गीता' में स्पष्ट कहा है कि जो शख्स बिना यज्ञ किये अर्थात् बिना प्रकृति और समाज का बदला चुकाये, सिर्फ अपने लिए पकाता और खाता है, वह "पाप" खाता है।

तो सर्वोदय को वोट देने का सहज तरीका यह है कि हममें से हर शख्स भूदान, संपत्तिदान, श्रमदान आदि दे। यह दानपत्र ही सर्वोदय का मत होगा। लाखों-करोड़ों की तादाद में दिये गये इन सर्वोदय के वोटों के जरिये निजी मालकियत की भावना खतम हो जायेगी, शोषण और विषमता का दौर-दौरा समाप्त होगा और प्रेम का साम्राज्य कायम होगा। ऐसे समाज में न कोई अमीर रहेगा, न गरीब, न कोई लेने वाला होगा, न कोई देने वाला, बल्कि सबके सब अपनी शक्ति भर करेंगे और जो पैदा होगा, उसे ईश्वर का प्रसाद समझ कर बाँट कर खायेंगे।

सूतांजलि सर्वोदय के वोट का नैमित्तिक प्रकार है। १२ फरवरी नजदीक आ रही है। हम सब उस दिन यह वोट देने की तैयारी करें। भूदान, संपत्तिदान, श्रमदान, सर्वोदय के वोट का शाश्वत या "नित्य" प्रकार है। एक दिन खाने से भूख नहीं मिटती। रोज-रोज खाना पड़ता है। उसी तरह भूदान-वृत्ति को, यानी त्याग किये बिना भोग न करने की वृत्ति को जीवन का नित्य का अंग बनाना पड़ेगा, तभी सच्चा सर्वोदय होगा और विश्व में शांति होगी।

योजना कैसे बन सकती है ?

(विनोबा)

दुनिया में जो बहुत-सी चीजें पैदा होती हैं, वे श्रम से पैदा होती हैं। लेकिन आज समाज में श्रम करने वाले चंद लोग हैं और दूसरे लोग योजनाएँ ही करते रहते हैं। पर योजना करने वाले और श्रम करने वाले, ये दोनों अलग-अलग पड़ जाते हैं, तो चीज बनती नहीं है। हम दो हाथों से चरखा कातते हैं। एक हाथ चक्र घुमाता है और दूसरा हाथ सूत खींचता है। चक्र फिराने वाला हाथ है, योजना करने वाला और खींचने वाला हाथ है, परिश्रम करने वाला। अगर चक्र घुमाने वाला हाथ ज़ोरों से चक्र घुमायेगा, तो उस हाथ को जोर से सूत खींचना पड़ेगा। वह अगर आहिस्ता आहिस्ता चक्र घुमायेगा, तो उसे भी आहिस्ता-आहिस्ता सूत खींचना पड़ेगा। याने एक है, योजना करने वाला, दिशा देने वाला। दूसरा है, उसके अनुसार चलने वाला, अमल करने वाला। दोनों एक ही मनुष्य के हाथ हैं, इसलिए काम अच्छा चलता है। मान लीजिये कि अगर ये दो मनुष्य हों याने एक मनुष्य चक्र घुमाने वाला और दूसरा तार खींचने वाला हो, तो बहुत मुश्किल हो जायेगी; क्योंकि एक मनुष्य कब जोरों से घुमायेगा और कब आहिस्ता घुमायेगा, इसका पता ही नहीं चलेगा। वेग देने वाले हाथ के अनुसार ही सूत खींचना पड़ता है। इतना ही नहीं, सूत खींचने वाले हाथ की ताकत देख कर ही चक्र घुमाना पड़ता है। दोनों की बात दोनों को समझ कर काम करना पड़ता है। अगर यह हाथ मंद होगा, तो दूसरे हाथ को भी मंद होना पड़ता है। इसलिए दोनों के अनुसार दोनों काम करते हैं।

यही शक्ति है। यह इसलिए बनता है कि दोनों एक ही मनुष्य के हाथ हैं। उधर से कोई गेंद फेंक रहा है। हमारी आँखों ने वह देखा और हाथों ने झेल लिया और हमारे पाँव भी उस हिसाब से ज़रा दौड़े। उस गेंद को पकड़ने के लिए तीनों को काम करना पड़ा। पाँव को दौड़ना पड़ता है, हाथों को भी उस हिसाब से तैयारी रखनी पड़ती है और आँखें भी काम करती हैं। आँख, पाँव, हाथ-तीनों एक ही मनुष्य के हैं, इसलिए गेंद पकड़ सकते हैं। मान लीजिये कि तीनों अलग-अलग हों और एक पाँव से दौड़ता है, दूसरा हाथ से गेंद पकड़ता है और तीसरा आँखों से देखता हैं, तो क्या उससे खेल चल सकता है ?

चंद लोगों की बुद्धि कुछ काम करती है, इसलिए वे योजना कर सकते हैं और कुछ लोगों में श्रम की शक्ति होती है, इसलिए वे श्रम कर सकते हैं। परंतु दोनों अलग पड़ जायँ, तो काम नहीं बनेगा। दोनों मिल कर एक परिवार बनना चाहिए। मजदूर की कद्र योजना करने वालों को करनी चाहिये और मजदूरों को योजना करने वालों की क़द्र करनी चाहिए। दोनों को आपस-आपस में सलाह-मशविरा करनी चाहिए। योजना से जो लाभ होगा, वह दोनों को लेना चाहिये और काम की जिम्मेवारी भी दोनों पर होनी चाहिए। दोनों आपस-आपस में सलाह करें, योजना-पूर्वक काम करें, दोनों मिल कर काम की जिम्मेवारी उठायें। जो फल मिलेगा, वह भी दोनों को बाँट कर खाना चाहिए। इस तरह जब योजना में, काम की जिम्मेवारी उठाने में और फल भोगने में दोनों एक होंगे, तब काम अच्छा होगा।

कर्म के तीन अंग होते हैं। उसका एक अंग है योजना। केवल दिल्ली वालों की योजना नहीं चलेगी। दिल्ली और देहात एकत्र बैठ कर योजना बनायेंगे, तो काम होगा। इसके बिना कर्म का आरंभ नहीं होगा। कर्म के पहले योजना होनी चाहिए। इसलिए यह कर्म का प्रथम अंग है। प्रत्यक्ष काम करने की जिम्मेवारी दूसरा अंग है। उसमें सिर्फ मजदूर ही नहीं रहेंगे, योजना बनाने वालों का भी हाथ होना चाहिये। जो फल मिलेगा, वह तीसरा अंग है। भोग भी दोनों को समान मिलना चाहिये। प्रत्यक्ष कार्य की जिम्मेवारी और फल-भोग में दोनों को समान अंश मिलना चाहिये और दोनों का समान भोग होना चाहिए। तभी काम बनेगा और ताकत बनेगी।

(तिरुक्काट्टुपल्ली, तंजाऊर २१-१-'५७)

...तंत्र-मुक्ति और निधिमुक्ति सन् '५७ में भूदान-आंदोलन का उषागीत है। राष्ट्र-सेवा-दल के सेवक भूदान-यज्ञ के 'पायक' तो थे ही, अब वे 'नायक' भी बनेंगे। महाराष्ट्र की चेतना फिर से जाग्रत हो रही है। वहाँ ग्रामदान मिलने लग गये हैं।

(महाराष्ट्र के राष्ट्र-सेवा-दल को भेजे गये संदेश से) —विनोबा

---

www.vinoba.in

क्रांतिनिष्ठ तरुणों से—

(अण्णासाहब सहस्रबुद्धे)

प्रिय × × ×

कुछ लोग मुँह से कहते हैं, कुछ लोग नहीं कहते; फिर भी तुम्हारी पीढ़ी के बहुतेरे कार्यकर्ताओं के मन में हमारे काम की पद्धति के लिए और हमारे तौर-तरीके के लिए आदर नहीं हैं, बल्कि वे यह समझते हैं कि हमारी संघटना में या हमारे जैसे व्यक्तियों की मातहत काम करते रहना आत्मविकास की दृष्टि से कभी फ़ायदेमंद नहीं होगा। इसलिए उचित यही होगा कि हम अपनी प्रवृत्ति के अनुरूप स्वतंत्र कार्य का निर्माण करें और अपने अनुकूल वातावरण बनाने की कोशिश करते रहें। यह काम उतना आसान नहीं है। उसमें असफलता का भी संभव है। परन्तु यदि आत्मविकास की इच्छा हो, तो ऐसे कँटीले मार्ग को अपनाना होगा और उसके लिए आवश्यक अग्निपरीक्षा देने की महत्त्वाकांक्षा भी रखनी होगी। अन्यथा न तो हमारी अपनी प्रगति होगी और न उन संस्थाओं का कोई लाभ होगा, जिनमें हम लाचार होकर काम करते हैं। हम हमेशा असन्तुष्ट ही रहेंगे, मन में नैराश्य उत्पन्न होगा और अन्त में सारे संसार को हम नास्तिक की दृष्टि से ही देखने लगेंगे।

आलोचक या टीकाकार होना अलग बात है और नास्तिक होना अलग बात है। जो आलोचक बनता है, उसका चिंतन सतत जारी रहता है और वह प्रगति करता रहता है, परन्तु हर चीज़ को नास्तिकता से देखने से नैराश्य ही पैदा होता है। इसकी अपेक्षा चाहे वनवास भोगना पड़े, यंत्रणाएँ सहनी पड़ें, ठोकरें खाते-खाते आगे बढ़ना पड़े, भूखा-प्यासा रहना पड़े. तो भी अपनी इच्छा के मुताबिक स्वतंत्रतापूर्वक कार्य का निर्माण करने में ही पुरुषार्थ है, कृतार्थता है, प्रगति है तथा देश और समाज की सच्ची सेवा है। स्वतंत्र रूप से काम करने के लिए योग्यता भी चाहिए। पानी में उतरने के बाद ही तैरना आने लगता है, इसी तरह काम की योग्यता काम करने से ही आती है। इसलिए हमको अपने आज के जीवन का गम्भीरता से विचार करना चाहिए। अपने पुरुषार्थ के अनुरूप नवीन क्षेत्र का हलके-हलके निर्माण करने की दृष्टि से हमें प्रयत्न शुरू करना चाहिए।

यदि यह सम्भव न हो, तो हमको यह समझ लेना चाहिए कि पुरानी पुश्त और नयी पुश्त की वैचारिक भूमिका, आचार-विचार तथा जीवन के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर जरूर रहेगा। इसलिए दोष देखने की दृष्टि छोड़ कर पिछली पुश्त के साथ मेल करने की वृत्ति हमको रखनी चाहिए। हर हालत में हमें यह निश्चय कर लेना चाहिए कि पिछली पीढ़ी के कन्धे पर बैठ कर ही आगे बढ़ना है और उस दृष्टि से हमें अपने बर्ताव में, विचार करने के तरीके में और दृष्टिकोण में परिवर्तन कर लेना चाहिए।

हम जब तुम्हारी उम्र के तरुण थे, उस वक्त स्वतंत्रता की लड़ाई का ज़माना था। गांधीजी जैसे लोकोत्तर पुरुष का नेतृत्व देश को प्राप्त था, इसलिए तुम्हारे मन में जिस तरह का तुमुल द्वन्द्व चलता रहता है, उसका अनुभव हमें अपने जीवन में नहीं हुआ। हम तिलक की विचार-धारा में पले। शुरू में हमारा अहिंसा में विश्वास नहीं था। 'शठ प्रति शाठ्यम्' के तत्त्वज्ञान में ही हम पले थे। इसलिए गांधीजी के तत्त्वज्ञान को दस-पंद्रह वर्ष तक हम आत्मसात नहीं कर सके। परन्तु उन्होंने आंदोलन के एक के बाद एक ज्वार देश में उठाये। इसीलिए हम हमेशा उनके प्रति आकर्षित रहे। बात गले नहीं उतरती थी, तो भी हम गांधीजी के निंदक नहीं बने। गांधीजी के मार्ग से ही आज देश की प्रगति हो रही है। यह अनुभव हमको क्षण-क्षण होता रहा, इसीलिए यद्यपि उनकी कई बातें बुद्धि में नहीं खपती थीं, तथापि 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' की भावना से हमने उन बातों का आत्मसात किया और उन पर आचरण किया। इसलिए हमको अपने जीवन में पुरानी पीढ़ी और हमारी पीढ़ी का संघर्ष बहुत जान नहीं पड़ा।

स्वराज्य के बाद अब ज़माना बदल गया है। अब जो कोई सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति की दृष्टि से नेतृत्व कर सकेगा, वही तरुणों को आकर्षित कर सकेगा। इस तरह का नेतृत्व आज सभी जगह नहीं दिखायी देगा। आज जो विधायक काम चल रहे हैं, उन सबमें ऐसी क्रान्ति को निकट लाने की शक्ति नहीं है। तरुणों को यह चीज़ समझ लेनी चाहिए। आज जो विधायक कार्य चल रहे हैं, वे रिलीफ़ के या सहायता के ढंग के हैं। उनकी तरफ़ इसी दृष्टि से देखना चाहिए। उन कार्यों की मर्यादाओं को समझ लेना चाहिए। यदि आज की सर्वसामान्य विधायक प्रवृत्तियों में काम करना हो, तो यही समझ कर काम करना चाहिए कि हम रिलीफ़ के काम में हाथ बँटा रहे हैं।

आज की प्रवृत्तियों को सर्वोदय के अर्थशास्त्र की कसौटी पर कसना, उन प्रवृत्तियों को चलाने वाले व्यक्तियों को सर्वोदयी मान लेना और उन व्यक्तियों तथा प्रवृत्तियों में सर्वोदय पाया नहीं जाता, इसलिए उनकी तरफ से निराश हो जाना, ऐसी हालत अनेक तरुणों की अनेक जगह मैं देखता हूँ। क्रांतिनिष्ठ तरुणों को यह बात समझ लेनी चाहिए कि रिलीफ के काम से क्रान्ति नहीं होगी। रिलीफ का काम करने वाले कार्यकर्ता यदि यह मानते हों कि अपनी गृहस्थी व्यवस्थित चला कर आज आवश्यकतानुसार वेतन लेकर हम सर्वोदयी क्रांति कर लेंगे, तो कहना होगा कि वे अपने आपको धोखा दे रहे हैं। क्रांति के लिए इसकी अपेक्षा कठोर तपस्या की जरूरत होती है। वह तपस्या और वह त्याग जितनी मात्रा में हम प्रत्यक्ष रूप से करेंगे, उतनी ही मात्रा में हम क्रांति के राहगीर बनेंगे। क्रांति के लिए राहत के काम की दुखदायक नौकरियाँ हमें छोड़ देनी पड़ेंगी और मारे-मारे घूमना होगा। आज जो दरिद्रता में डूबे हुए हैं, उनके साथ बैठ कर उनका जीवन भुगतना पड़ेगा और उनकी सतह पर उतर कर उनके साथ एकरूप होना पड़ेगा, तभी सर्वोदयी विचारों की प्रगति होगी, सर्वोदयी क्रांति की तरफ हम एक कदम आगे बढ़ सकेंगे। इस प्रकार की कठिन तपस्या की सामर्थ्य नयी पीढ़ी के तरुणों में कैसे आयेगी, यह गंभीर चिंतन का विषय है। और उससे भी अधिक गंभीर चिंतन का विषय तरुणों के लिए यह है कि वह सामर्थ्य अपने अन्दर वे जाग्रत किस तरह कर सकते हैं? आजकल मैं इस दृष्टि से चिंतन कर रहा हूँ।

इन विचारों में जो ग्राह्य हो, उतना आप ले लें, जितना पच सके, उतने का आचरण करें और यदि आचरण की शक्ति आज ही न हो, तो वह शक्ति प्राप्त करने की दृष्टि से आप विचार और आचार करें, ऐसी विनति इस पत्र के द्वारा मैं करता हूँ।*

*रचनात्मक संस्था के एक तरुण कार्यकर्ता के नाम लिखे गये पत्र से।

(मराठी "साधना" से साभार)

खादी-काम का स्वरूप अब कैसा रहे?

[सर्व-सेवा-संघ की खादी-ग्रामोद्योग-समिति द्वारा अहमदाबाद में ता. १५-१-५७ की बैठक में स्वीकृत-प्रस्ताव।]

खादी-विचार को स्पष्ट करते हुए पू० गांधीजी ने बतलाया था कि चरखा अहिंसात्मक समाज-रचना का प्रतीक है। अर्थात् खादी-काम केवल खादी-उत्पत्ति-बिक्री तक सीमित न होकर उसमें शोषणरहित और शासन-निरपेक्ष समाज-रचना की दृष्टि से ग्रामस्वावलंबन-ग्रामविकास की समग्र प्रवृत्तियों का समावेश होता है।

इस प्रकार ग्रामविकास की समग्र दृष्टि रख कर काम नहीं किया जायगा, तब तक खादी-कार्य पूर्ण विकास को प्राप्त नहीं होगा, न उसकी बुनियाद पक्की होगी। भूदान-आन्दोलन को तंत्रमुक्त किये जाने के बाद इस दिशा में रचनात्मक संस्थाओं की जिम्मेदारी और भी बढ़ गयी है। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि खादी या अन्य ग्रामोद्योगों का काम करने वाली संस्थाएँ नवसमाज-रचना की दृष्टि से किये जाने वाले ग्रामोन्नति के अन्य कामों को भी अपने काम का अंग मान कर अपने-अपने क्षेत्र में उन कामों को उठा लें तथा खादी आदि कामों को भी ग्रामस्वावलंबन के लक्ष्य को ध्यान में रख कर यथा-संभव ग्रामोदय-समितियों के जरिये और ग्रामसंकल्प की पद्धति से करने की ओर अग्रसर हों।

उपरोक्त उद्देश्य को ध्यान में रख कर प्रत्यक्ष व्यवहार के लिए कुछ सुझाव:

(१) कामगार अपने इस्तेमाल का सूत या खादी रख कर जो अधिक बनावे, वही बेचें।

(२) जिस गाँव में खादी बने, वहाँ वह ज्यादा से ज्यादा खपे। जो बचे, वही खादी शहरों में या दूसरे प्रान्तों में भेजी जाय।

(३) वस्त्रस्वावलंबन का काम बढ़ाने की दृष्टि से प्रत्येक कातने वाले को बुनाई की सेवा मुफ्त मिले, ऐसा प्रबंध करना चाहिए। खादी-ग्रामोद्योग-बोर्ड की ओर से वस्त्रस्वावलंबन बुनाई पर ७५ प्रतिशत मदद मिलती है। शेष २५ प्रतिशत बुनाई की जिम्मेदारी अगर संस्थाएँ उठा लेती हैं, तो वस्त्रस्वावलंबी को बुनाई मुफ्त पड़ सकती है। यह बुनाई-"सर्विस" प्रति व्यक्ति फिलहाल १२ वर्ग-गज की मर्यादा तक दी जाय।

(४) जिस तरह अक्षर-ज्ञान देने का सरकार ने अपना फर्ज माना है, उस तरह हर मनुष्य को कताई सिखाने की जिम्मेदारी भी वह उठा ले और वैसा कार्यक्रम चलावे।

—सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री,

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

८ फरवरी सन् १९५७

मनुष्य का वीकास कैसे हुआ ?

(वीनोवा)

हज़ारों वर्षों क॰ प्रयत्न क॰ परीणामस्वरूप मनुष्य का अ॰क 'कॉन्शन्स' (सदसद्वीव॰क) बना ह॰। स्वाभावीक ही कुछ चीज॰ अ॰सही बनती गयीं, जो मनुष्य क॰ ध्यान म॰ आयीं और कुछ नीष्ठाअ॰ बनीं। क्या करना अुचीत ह॰ और क्या अनुचीत ह॰, यह सोचत॰-सोचत॰ मनुष्य क॰ कुछ ख्याल बन॰ ह॰। जो अुचीत काम होगा, वह मनुष्य हमेशा करता ही ह॰, सो बात नहीं। परंतु क्या अुचीत और क्या अनुचीत ह॰, अीस वीषय म॰ मनुष्य क॰ वीचार तो बन॰ ही ह॰। कहीं अून हुआ। हम कारण तो नहीं जान पाय॰। ल॰कीन सुना, तो अेकदम ख्राब लगता ह॰। बाद म॰ कीस कारण स॰ अून हुआ, यह मालूम हुआ, तो बहुत ज्यादा ख्राब नहीं लगा। फीर अीसकी चर्चा भी होती ह॰ की यह जो अून हुआ, वह बहुत ख्राब हुआ या कम ख्राब हुआ। कोर्टम॰ भी चर्चा होती ह॰ और कीसी अूनी को फांसी की सज़ा मीलती ह॰, तो कीसी अूनी को फांसी की सज़ा नहीं भी मीलती ह॰। कहत॰ ह॰, गुनाह तो हुआ, ल॰कीन अुद्देश्य दूसरा था, अीसलीअ॰ क्षमा कर दी। अून का जो काम हुआ, वह तो ख्राब ही हुआ, ल॰कीन अुसकी डीग्री पर स॰ अुस॰ कम-ज्यादा न्याय मीलता ह॰। कहीं चोरी हुअी, तो अुस॰ हम अच्छा नहीं समझत॰। अुसने लाचारी स॰ चोरी की, तो भी अच्छा नहीं माना जाता। व्यभीचार हुआ, तो नीःसंशय ख्राब लगता ह॰। अीस तरह कार्याकार्य-वीचार मनुष्य-समाज म॰ स्थीर हुआ। अीसीको 'कॉन्शन्स' कहत॰ ह॰, मानव का सदसद् वीव॰क कहत॰ ह॰। यह मानव-हृदय कीसन॰ बनाया ? बड़े-बड़े राजा हो गय॰, शरीमान, व्यापारी हो गय॰, ल॰कीन मानव-हृदय बनान॰ म॰ अुनका हीस्सा नहीं था। यह जो मानव का वीव॰क बना ह॰, समाज म॰ जो नीतीशास्त्र बना ह॰, वह महापुरुषों न॰ और सत्पुरुषों न॰ बनाया ह॰।

कुछ लोग कभी-कभी कहत॰ ह॰, बड़े संतपुरुष और महामुनी हो गय॰, ल॰कीन फीर भी समाज म॰ बुराअीयां चलती ही ह॰! पर यह ख्याल गलत ह॰। अ॰स॰ महापुरुष हो गय॰, अीसीलीअ॰ तो हमारी अच्छी हालत ह॰। नहीं तो हम जानवर ही रहत॰। आज जो कुछ मानवता ह॰, भला-बुरा पहचानत॰ ह॰—चाह॰ अुस पर अमल न भी करत॰ हों—परंतु वह पहचानत॰ ह॰, तो यह भी अून महापुरुषों का ही अुपकार ह॰। अगर य॰ महापुरुष नहीं हुअ॰ होत॰ और अुन्होंने हमारे हृदय को जगाया नहीं होता, तो समाज का नीतीशास्त्र नहीं बना होता।

हम तो समझत॰ ह॰ की भूदान क॰ काम म॰ हम जो पांच-छह साल स॰ लग॰ ह॰ और जो भी यश मीला ह॰, वह सारा, लोगों को जो सद्बुद्धी अीन महापुरुषों न॰ दी ह॰, अुसक॰ कारण ह॰।

शरीरंगम्, त्रीची १७-१-५७

(लोकनागरी लिपि-संकेत: ि=ी ; ी=ी; ख=अ; संयुक्ताक्षर, हलंत से)

धरती माँ की मुक्ति के लिए भूदान-यज्ञ का निमंत्रण :

उत्तर प्रदेश की माँ-बहनें, छात्र छात्राएँ, कार्यकर्ता, खेतिहर मजदूर आदि के नाम—

भू-दान, यज्ञ एक यज्ञ है। इसका निमन्त्रण घर-घर पहुँचाना आवश्यक है। यज्ञ का निमन्त्रण पाने पर आहुति के रूप में क्या अर्पण करना है, इसकी प्रेरणा हृदय-स्थित भगवान् स्वयं ही दे देंगे। हम तो इतना ही जानते हैं कि स्वेच्छा से किया हुआ कार्य प्रसन्नता प्रदान करने वाला होता है।

आपकी सेवा में हम भूदान-यज्ञ का निमंत्रण श्री तुलसी-दल के रूप में भेज रहे हैं और चाहते हैं कि तुलसी-दल में और भी तुलसी मिला कर, यज्ञ का यह निमंत्रण आप अपने गाँव व इलाके के सब घरों में पहुँचा दें। उनसे कहें कि महात्मा गान्धी ने १९३० में पूरी आजादी का जो संकल्प कराया था, उसको पूरा करने के लिए सन्त विनोबाजी सबके भले के लिए भूदान-यज्ञ करा रहे हैं। उसकी पूर्णाहुति में कृपा कर आप सब भाग लें। हमें पूरा भरोसा है कि उत्साह से इस यज्ञ के पावन कार्य में भाग लेकर तथा अपने साथियों से लिवा कर यज्ञ को पूरा करने में आप मदद करेंगे। भगवान् हमें इसमें सफल बनावें, यही भगवत्-चरणों में हाथ जोड़ कर प्रार्थना है।

(पदयात्रा से)

हम हैं आपके विनीत,

—(बाबा) राघवदास और अन्य साथी गण

सर्वोदय की दृष्टि से :

सत् + आवन = सत्तावन् !

सन् सत्तावन् के नाम से लोगों के मन में तरह-तरह की कल्पनाएँ उठती हैं। संयोग ऐसा हुआ है कि सत्तावन् का साल हमारे देश की पिछली दो-तीन सदियों के इतिहास की विशेष घटनाओं से संबंधित रहा है। सत्तावन् के नाम से कई लोगों के मन में एक अज्ञात डर खड़ा हो जाता है। वे यह समझते हैं कि सत्तावन् में मारकाट होगी, उपद्रव होगा, खून की नदियाँ बहेंगी, क्योंकि लोगों को अभी तक क्रांति का यही रूप मालूम है।

सत्तावन् में क्रांति जरूर होनी चाहिए और होगी। पर पिछले सौ वर्षों में विज्ञान इतना आगे बढ़ गया है कि पुराने तरीके से क्रांति होना अब न संभव है, न इष्ट ही है। कहानी के मेंढ़क की तरह हिंसा ने अपना पेट इतना फुला लिया है कि अब सिर्फ एक और साँस की देर है कि वह खुद ही खतम हो जायगी। अणुयुग में हिंसा का मतलब है, जो लड़ते हैं, उन्हींका नहीं; लेकिन सारी दुनिया का सर्वनाश। और इसीलिए अब जिनके पास आणविक हथियार हैं, वे भी लड़ाई करना नहीं चाहते। जब स्वार्थ से प्रेरित होकर आपस में झगड़ने वाले भी विज्ञान के कारण अब हिंसा से डरते हैं, तो क्रांति के काम के लिए यानी मौजूदा अन्यायों को खतम करके समता और भाईचारा कायम करने के लिए, हिंसा के उपयोग का सवाल ही नहीं उठता। समय का तक़ाज़ा और विज्ञान की मांग है कि अब जो कुछ भी हो, वह प्रेम से ही हो। विज्ञान ने हमें इस तरह सोचने के लिए मजबूर कर दिया है। विज्ञान के आविष्कारों के पहले के जमाने में फिर भी हिंसा से कभी-कभी तात्कालिक फायदा होता नजर आता था, पर अब वह भी संभव नहीं है। अब हिंसा यानी सर्वनाश ! विज्ञान का मेल हिंसा से नहीं, अहिंसा से यानी आत्म-ज्ञान से ही बैठ सकता है।

इसलिए हिंसा अब "आउट ऑफ डेट"—यानी बीते हुए जमाने की चीज हो गयी है। या तो मेंढ़क को अपने पेट की साँस बाहर निकलनी होगी या एक साँस और अन्दर लेकर यह खुद खतम हो जायगा। आज सौभाग्य से या दुर्भाग्य से जिनके हाथ में दुनिया का तंत्र आ गया है, या तो वे सदा के लिए हिंसा का त्याग करें या ईश्वर न करे ऐसा हो—एक और महायुद्ध दुनिया को हिंसा के रास्ते से उबार ले। दोनों सूरतों में भविष्य अहिंसा के हाथ होगा।

क्रांति की बेला आ गयी है। दुनिया के सारे हालात को देखते हुए यह जाहिर है कि मौजूदा स्थिति ज्यादा दिन नहीं चल सकेगी। हम युग-परिवर्तन की देहलीज़ पर खड़े हैं। पर अब जो क्रांति होगी, वह ऊपर-ऊपर की नहीं होगी, बल्कि खुद क्रांति की परिभाषा में और उसकी प्रक्रिया में ही क्रांति होगी। नदियाँ जरूर बहेंगी, पर खून की नहीं, प्रेम की !

इसलिए सन् ५७, सत् + आवन है !

—सिद्धराज ढड्ढा

प्रवास—१४-१-५७

www.vinoba.in

अहिंसा कब और कैसे काम करती है ?

(गांधीजी)

प्रो० मेस ने कहा :

"अहिंसा की श्रेष्ठता के बारे में मन में कोई शक नहीं है। लेकिन मुझे जो चीज परेशान करती है, वह यह है कि बड़े पैमाने पर उसका असर कैसे हो सकेगा ? प्रेम की बुनियाद पर आम लोगों के मन को अनुशासित करना मुश्किल मालूम होता है। व्यक्तियों का अनुशासन करना उससे आसान है। लेकिन जब व्यक्तियों का समूह बेकाबू हो जाये, तो हम कौनसी हिम्मत से काम लें ? अपना कदम वापस ले लें या आगे बढ़ते चलें ?"

गांधीजी ने जवाब दिया :

"इसका मुझे इस देश में अपने आंदोलन में अनुभव हुआ है। केवल शाब्दिक उपदेश से लोगों को शिक्षण नहीं मिलता। अहिंसा का उपदेश नहीं हो सकता। उसका आचरण करना पड़ता है। हिंसा का प्रयोग लोगों को बाह्य प्रतीकों द्वारा सिखाया जा सकता है। पहले तख्तों पर निशाना लगाया जाता है। फिर लक्ष्य पर, और बाद में जानवरों पर। तब विनाश की कला में निष्णात होने का प्रमाण-पत्र आपको दिया जाता है।

"अहिंसक मनुष्य के पास कोई बाह्य साधन नहीं होता और इसलिए उसकी वाणी ही नहीं, बल्कि उसकी कृति भी प्रभावहीन मालूम होती है। "मैं तुमसे सब तरह की मीठी बातें कहता रहूँ, तो भी मेरे मन में कुछ और हो सकता है। इसके विपरीत मेरे मन में वास्तविक प्रेम होने पर भी ऊपर से मेरा सारा रंग-रूप भयंकर हो सकता है। या दोनों स्थितियों में बाहर से मेरा आचरण एक ही-सा हो सकता है। लेकिन नतीजा शायद कुछ और ही हो। क्योंकि प्रायः हमारी कृति का प्रभाव तब अधिक होता है, जब कि कृति स्पष्ट रूप से प्रकट नहीं होती।

"अनजान में आप इस वक्त मुझ पर जो असर डाल रहे होंगे, उसका शायद मुझे कभी पता भी न चले। फिर भी इतना तो निश्चित है कि आप जान-बूझ कर मुझ पर असर डालेंगे, उससे यह असर कहीं अधिक होगा। हिंसा में अप्रकट कुछ नहीं रहता।

"किंतु अहिंसा तीन-चतुर्थांश अप्रकट रहती है और जिस मात्रा में वह अप्रकट रहती है, उसी मात्रा में प्रभावशाली भी होती है। जब अहिंसा सक्रिय होती है, तो वह असाधारण वेग से आगे बढ़ती है और फिर वह चमत्कार का रूप ले लेती है। इस तरह लोक-मानस पर पहले अप्रकट रूप से परिणाम होता है और बाद में प्रकट रूप से। जब प्रकट रूप से लोक-मानस प्रभावित होता है, तो विजय भी स्पष्ट रूप से दिखायी देती है।

"मेरा अपना यह अनुभव है कि जब लोग कमज़ोर पड़ते हुए दिखायी दिये, तब मेरे मन में पराजय की कोई भावना नहीं थी।

"इस तरह सन् १९२२ में सविनय कानून-भंग का त्याग करने के बाद अहिंसा की कार्यक्षमता के बारे में मेरे मन में अधिक आशा थी और आज भी मैं उसी आशानिष्ठ मनोदशा में हूँ। यह केवल भावनात्मक वस्तु नहीं है। समझ लीजिये कि उषा के आगमन के कोई चिह्न मुझे दिखायी नहीं देते, तब भी मुझे श्रद्धा नहीं खोनी चाहिए। हर चीज के आने का अपना एक समय होता है।

"हम यहाँ जो भंगीकाम करते हैं, उसके विषय में सहयोगियों से मैं विचार-विमर्ष करता हूँ। वे पूछते हैं कि हम यह सब स्वराज्य के बाद करें, तो क्या हर्ज है ? स्वराज्य के बाद हम उसे शायद और भी अच्छी तरह कर सकें।

"उनसे मैं कहता हूँ, नहीं—यह सुधार आज ही होना चाहिए। उसे स्वराज्य के लिए रुकना नहीं चाहिए। सच तो यह है कि उचित प्रकार का स्वराज्य इसी तरह के काम से आयेगा। अब शायद मैं आपको स्वराज्य और सफाई-काम का संबंध सिद्ध करके नहीं बतला सकता, जैसा कि मैं अपने कुछ साथियों को भी नहीं बतला सकता।

"अगर मुझे अहिंसा से स्वराज्य लेना है, तो मुझे अपने लोगों को अनुशासित करना होगा।

"लूले-लंगड़े-अपाहिज-अंधे और कोढ़ी हिंसा की सेना में दर्ज नहीं हो सकते ! वहाँ तो पलटन में भरती होने के लिए उम्र की कैद भी होती है। "अहिंसक संघर्ष में कोई वयोमर्यादा नहीं होती। उसमें तो अंधे-अपंग और खाट पर पड़े हुए बीमार भी काम कर सकते हैं। और सिर्फ पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी। अहिंसा की वृत्ति जब सारी जनता को व्याप्त लेती है और सक्रिय हो उठती है, तो उसका परिणाम सबको दिखायी देता है।

"अब यहाँ आपका सवाल आता है। आप कहते हैं कि कुछ लोग ऐसे हैं, जिनका अहिंसा में विश्वास नहीं है, जैसा कि आपका विश्वास है। तो उस हालत में क्या आप चुप बैठेंगे ? वे मित्र पूछते हैं कि इस वक्त यदि आप क्रियाशील नहीं होंगे, तो कब होंगे ?

"जवाब में मैं कहता हूँ कि शायद अपनी जिंदगी में मुझे सफलता न मिले। लेकिन मेरा यह विश्वास पहले की अपेक्षा अधिक दृढ़ हो गया है कि विजय केवल अहिंसा के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। जब फैज़पुर में मैंने चरखे की उपासना के विषय में भाषण किया, ता एक समाचार-पत्र के संवाददाता ने मुझ से कहा कि 'आप बड़े चंट हैं।'

"पर मेरे मन में ऐसा कोई धुंधला भाव भी नहीं था।

"जब मैं सेवाग्राम आया, तो मुझसे कहा गया कि आपके साथ गाँव के लोग सहयोग नहीं करेंगे, बल्कि हो सकता है कि वे आपका बहिष्कार करें। मैंने कहा, हाँ, ऐसा हो सकता है। लेकिन अहिंसा इसी तरह काम करती है। अगर मैं किसी ऐसे गाँव में चला जाऊँ, जो इससे भी अधिक फासले पर हो, तो यह प्रयोग शायद अधिक सफल हो।

"अहिंसा की प्रक्रिया की खोज में इन सारी बातों का मुझे पता चला और हर दिन जो बीतता है, वह मेरी निष्ठा को अधिक उज्ज्वल बना कर जाता है। अपनी इस निष्ठा को चरितार्थ करने के लिए मैं यहाँ (सेवाग्राम) आया हूँ और ईश्वर की अगर वैसी हालत हो, तो उसी प्रयत्न में मरने के लिए आया हूँ।

"अहिंसा अगर किसी कीमत की होना चाहती है, तो उसे विरोधी शक्तियों का सामना करके आगे बढ़ना चाहिए। लेकिन अकर्म में भी कर्म हो सकता है और अकर्म से कर्म बदतर हो सकता है।" —"नॉन-वायलेंस इन पीस ऐंड वार" से। (प्रो. मेस नामक अमेरिकन नीग्रो से बातचीत, सेवाग्राम, १९३७)

विश्वशांति का आधार : ग्रामराज

(कन्हैयाभाई)

आज युद्ध की विभीषिका से मानव भयभीत, त्रस्त एवं पीड़ित है। शांति की भूख उसे सता रही है। लेकिन इसके बचाव के लिए जिस राह से वह जा रहा है, वह राह दुर्भाग्य से उसे खाई की ओर ही ले जा रही है। उस रास्ते से-अर्थात् ऊपरी उपचारों से विश्वशांति संभव नहीं, यह दिनोंदिन स्पष्ट होते जा रहा है। इसलिए आज विश्वशांति का पहला आधार यह होना चाहिए कि सब इसे हृदय से स्वीकार करें कि "इस अनन्त आकाश के नीचे रहने वाले समस्त मानव एक ही ईश्वर की सन्तान हैं।" जब तक इस भावना का उदय पूरे मानव-हृदय में नहीं होता, तब तक युद्ध जारी रहेंगे और फलस्वरूप अशांति भी क़ायम रहेगी।

शांति का दूसरा आधार होगा, समाज में गुणात्मक सभ्यता का विकास। आज सभ्यता एवं संस्कृति की कसौटी प्रचुरता और परिणाम में निहित है। जिसके पास जितनी अधिकतम सामग्री है, उसे हम आज के समाज में उतना ही सभ्य मान लेते हैं; पर वस्तुओं की बाहुल्यता पर सभ्यता की कसौटी न मान कर मनुष्य के गुणों के विकास पर ही सभ्यता की कसौटी मानी जानी चाहिए।

तीसरा आधार, प्रत्येक मुल्क में विवेकयुक्त संतुलित अर्थ-व्यवस्था होगा। आज करीब-करीब प्रत्येक मुल्क प्रचुर-उत्पादन और आवश्यकता से अधिक उत्पादन करके दूसरे मुल्कों में अपने माल की खपत के लिए बाज़ार की तलाश में युद्ध के लिए तैयार है। इसीलिए संतुलित उत्पादन का होना जरूरी है।

विश्व-शांति का चौथा और आखिरी आधार होगा, छोटे-छोटे समुदाय (Small community or social unit)। दूसरे शब्दों में विकेन्द्रित व्यवस्था एवं अर्थ-रचना का होना जरूरी है। ऐसी विकेन्द्रित व्यवस्था में छोटे-छोटे घरेलू और ग्रामोद्योग होंगे। उन स्थानीय उद्योगों पर नियंत्रण भी स्थानीय हो तथा अधिक से अधिक व्यक्तिगत जिम्मेदारियाँ उन समुदायों पर ही रहें।

यदि हमने इतना कर लिया, तो समाज में गुणात्मक मूल्यों की प्रतिष्ठापना के बारे में स्वतंत्र चिन्तन हो सकेगा ! शक्ति का जो अधिष्ठान आज केन्द्रीय सरकारों तथा फौजों के हाथों में है, वह वहाँ से हटकर धीरे-धीरे गाँवों और कस्बों में चला जायेगा, जिसकी कि कल्पना आज हम 'ग्रामराज्य' के रूप में करते हैं। इसीलिए हम कहते हैं कि ग्रामराज्य द्वारा विश्व-शांति सम्भव है।

www.vinoba.in

गंभीर प्रतिज्ञा !

(दामोदरदास मूँदड़ा)

तारीख पचीस जनवरी को इस देश में एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना हुई !

मदुराई ज़िले के तिरुमंगलम् तालुका के लोगों ने एक परम मंगलमय संकल्प किया। यह संकल्प उनके उस वचन की पूर्ति में था, जो उन्होंने भूदान-यज्ञ के होता को अपने इलाके की पदयात्रा की परिसमाप्ति के अवसर पर प्रदान किया था। उस दिन विनोबाजी ने उनसे तालुका-दान की माँग की थी और उन लोगों ने आश्वासन भी दिया था कि तालुका-दान का प्रयत्न किया जायगा। इस आश्वासन की पूर्ति के संबंध में जिले के सभी कार्यकर्ता गत १४ जनवरी को अपने राष्ट्रीय त्योहार 'पोंगल' के रोज गांधी-निकेतन, कलुपट्टी में एकत्रित हुए थे। पोंगल दक्षिण का सबसे बड़ा त्योहार होता है।

उत्साह तो मल्लर तालुका का भी अधिक था, पर तिरुमंगलम् ने सबसे ज्यादा ग्रामदान दिये थे। 'गांधी-निकेतन' के कार्यकर्ताओं ने यहाँ गत कई वर्षों से ग्रामराज्य के मंत्र का सतत जप भी जारी रखा था। आज उन्हें उम्मीद हुई कि हमारा स्वप्न साकार होने वाला है।

पोंगल के रोज़ ही तय हुआ कि तिरुमंगलम् तालुका के सभी ग्रामों के प्रतिनिधियों का एक संमेलन बुला कर तालुका-दान की सामूहिक प्रतिज्ञा ली जाय। तालुका में ढाई सौ 'रेविन्यू' ग्राम हैं। छोटे मोटे टोले मिला कर सात सौ पचास। पचीस तारीख को एक ओर कलक्टरी में आगामी चुनावों के लिए नाम-ज़दगियों के पर्चे भरने-भराने वालों की भीड़ लग रही थी। उसी रोज़ गांधी-निकेतन में गांधीजी की प्रतिमा की छत्र-छाया में करीब पाँच सौ प्रतिनिधियों ने तालुका-दान का महान् क्रांतिकारी संकल्प किया।

सबसे पहले इलाके के एक सेवक, गांधी-निकेतन के संचालक श्री गुरुस्वामी ने कार्य की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए बताया कि इस प्रसंग के साक्षी रहने के लिए विनोबाजी के तथा सर्व-सेवा-संघ के प्रतिनिधि उपस्थित हुए हैं। उन्होंने अपना अनुभव बताते हुए यह घोषणा की कि गाँव वालों के मन में अब यह भावना भर गयी है कि ग्रामदान से हमारा और सारे समाज का कल्याण होने वाला है। सभा के अध्यक्ष श्री जगन्नाथनजी ने प्रांत के मुख्य मंत्री का निम्न पत्र पढ़कर सुनाया :

"प्रिय जगन्नाथन्,

"ग्रामदानी कार्यकर्ताओं के संमेलन में मैं स्वयं भाग लेना चाहता था, लेकिन ऐसा कुछ अनिवार्य काम आ पड़ा है कि नहीं आ पाया।

भूदान-आंदोलन ग्रामदान के रूप में विकसित होते देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है। मदुराई जिले के १२७ गाँवों के लोगों ने व्यक्तिगत स्वामित्व छोड़ कर अपनी समस्त भूमि गाँव-समाज के लिए अर्पित की है। अब सभी साथ-साथ सुखी होंगे। हमारे मुल्क के लिए यह बड़ी गौरवपूर्ण बात है। काम दस गुना के हिसाब से बढ़ते रहे, ऐसी मेरी आकांक्षा है।

"मेरा यह विश्वास है कि केवल जमीन के ही नहीं, दूसरे असंख्य सवालों को भी हल करने की नैतिक ताकत इस आंदोलन के भीतर समायी हुई है, जो कानून के द्वारा सर्वथा असंभव है। मुझे यकीन है कि गाँवों की आर्थिक प्रगति और सामाजिक एकता के लिए भूदान-आंदोलन पूरा मददगार साबित होगा। मेरी सरकार इस बात का सावधानी-पूर्वक अध्ययन कर रही है कि ग्रामदानी गाँवों की दृष्टि से कौनसे सहायक कदम उठाये जा सकते हैं।

"तमाम कार्यकर्ता, अपने अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप, विनोबाजी की इच्छानुसार तालुकादान निःसंदेह रूप से प्राप्त करेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।"

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री जगन्नाथनजी ने सारे तालुका के लोगों को बधाई दी कि वे अपने-अपने गाँवों को गोकुल बनाने की भावना से कृत-संकल्प होकर यहाँ अपने प्रतिनिधियों के रूप में आये हैं। तालुका के पौने चार लाख लोगों का आपस में एक परिवार बनाने का यह संकल्प सारी दुनिया का परिवर्तन करने की शक्ति रखता है। मीनाक्षी माता की कृपा से और पूज्य बाबा के आशीर्वाद से यह संकल्प पूरा होगा, इसमें हमें कोई संदेह नहीं है।

सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री वल्लभस्वामी ने संमेलन का उद्घाटन करते हुए कहा कि ग्रामदान, ग्राम-उद्योग और पारस्परिक प्रेम—यह एक ऐसी प्रक्रिया है कि जिससे ग्रामराज्य और रामराज्य प्रगट हुए बिना नहीं रह सकते। जैसे हम किसी काम को एक-दो-तीन के साथ फौरन संपन्न कर लेते हैं, वैसे ही रामराज्य की यह शीघ्र परिणामकारी त्रिविध प्रक्रिया है।

फिर गांधीग्राम के श्री. जी. रामचन्द्रन् बोलने लिए खड़े हुए। उन्होंने अपनी प्रभावकारी वाणी से कहा—"यह आखिरी समय है। यहाँ चर्चा की आवश्यकता नहीं।" अपने बारे में आगे कहा :

"अब तक मैं स्वयं इस आंदोलन से अछूता रहा, परंतु जब बाबा गांधीग्राम आये, तो मैं उनके प्रभावकारी स्पर्श से अछूता नहीं रह सका ! मेरा अहंकार दूर हो गया। विनोबाजी मेरा हृदय तो कब का पा चुके थे, पर अब तो मेरी बुद्धि भी उन्हें समर्पित है, क्योंकि मुझे संदेह नहीं रहा कि यह काम महान् क्रांतिकारी है और बिना इसके मुक्ति नहीं है। हमारे सारे रचनात्मक कामों का यही आधार है। अगर यह ग्रामदान और तालुका-दान सफल नहीं हुआ, तो हमारे सारे रचनात्मक कार्य नष्ट हो जावेंगे। इसलिए यह काम सिर्फ जोड़ देते रहने से नहीं, गुणाकार करने से होगा और तालुकादान को भारत-दान में परिणत कर देना होगा। भारत-दान से ही इस संकल्प की पूर्णाहुति होने वाली है।"

अब तक तो नेता और कार्य-कर्ता लोग बोलते रहे। अब गाँव के लोगों में से एक-एक आकर मंच पर खड़ा रहने लगा और अपनी निष्ठा ज़ाहिर करने लगा। एक भाई ने कहा कि हमें चुनावों की झंझट में न फँस कर इसी काम में जुट जाना है। एक ग्राम-सेवक ने कहा कि "हम तो सरकारी नौकरी में रहकर पूरी शक्ति से काम नहीं कर सकते। एक दिन एक गाँव में जाकर घंटा भर समझा कर लौट आना पड़ता है। विचार तो एक-एक गाँव में टिक कर समझाना पड़ता है।" उस भाई ने नौकरी से इस्तीफा देने की भी तैयारी प्रकट की। ज़िलाधीश खुद भी इस संमेलन के लिए आये थे। सरकार द्वारा ग्रामदानी गाँवों के लिए नियुक्त कमेटी की जानकारी उन्होंने दी और यह भी बताया कि उड़ीसा की तरह यहाँ भी शीघ्र ही ग्रामदानी कानून बनने की संभावना है।

अमेरिकन मिशनरी श्री कैथान, जो इस प्रदेश में गत अनेक वर्षों से सेवा-कार्य कर रहे हैं—तमिल में ही बोले : "बाबा तमिलनाड में एक नयी ज्योति दिखाना चाहते थे—वह इस मदुरा ज़िले में प्रगट हुई। यदि यहाँ तालुका-दान हुआ, तो सारे ज़िले का दान भी हो सकता है।"

सर्व-सेवा-संघ के दूसरे मंत्री श्री सिद्धराजजी ढड्ढा का भी बहुत भाव भरा भाषण हुआ। अपने अनुभव से उन्होंने बताया कि कैसे सरकारी तंत्र द्वारा न तो ग्रामोद्योगों की रक्षा की जा सकती है, न लोकशाही का विकास हो सकता है। ग्राम-राज्य द्वारा ही हम सब प्रकार की बाहरी सत्ता खत्म करके गाँववालों की सत्ता स्थापित कर सकते हैं। ग्रामदान और ग्राम राज्य की कल्पना को साकार करने से न सिर्फ भारतवासियों की, बल्कि देश के बाहर के भी करोड़ों लोगों की भावना सफल होने वाली है। आप यहाँ सफल होंगे, तो सारे शोषित लोगों का आंदोलन सफल होगा।

संमेलन एक अत्यंत पावन भावना और अनुभूति की संवेदना से अभिभूत हो रहा था कि श्रीवेंकटाचलपति ने प्रतिज्ञा का मसौदा पढ़ कर सुनाया।

यह प्रतिज्ञा इसी अंक में पहले पृष्ठ पर छपी है।

श्री वेंकटाचलपति ने प्रतिज्ञा को कार्यान्वित करने की व्यूह-रचना भी समझायी। पाँच-पाँच कार्यकर्ताओं की पच्चीस टोलियाँ पूर्ण तालुका में घूमेंगी। हर गाँव के लोग तो मदद में रहेंगे ही। तालुका में कुल आठ फिरके हैं। फिरके-फिरके में आपस में होड़ होनी चाहिए कि कौन फिरका पहिले पूरा दान में प्राप्त होता है। श्री वेंकटाचलपति एक-एक वाक्यांश का उच्चारण करते गये। सारी सभा ने खड़े रह कर प्रतिज्ञा को गंभीरता से दोहराया। २८ बरस पहिले रावी के किनारे जो दृश्य दिखाई दिया, उसकी स्मृति पुनः एक बार ताजी हो गयी।

तिरुमंगलम् तालुके की आबादी पौने चार लाख है। आबादी के मुताबिक गाँवों का वर्गीकरण इस तरह है :

५०० से कम बस्तीवाले	७८	५०० से १००० तक	६१		
१००० से २००० तक	७३	२००० से ५००० तक	४७		
५००० से १०००० तक	६	१०००० से २००००० कक	२		
				कुल	२६७

www.vinoba.in

विनोद की घड़ियों में : २.

(श्रीकृष्णदत्त भट्ट)

"Why did Baba tear away the shirt of that chap ?" —बाबा ने उस लड़के की क़मीज़ क्यों फाड़ डाली ? मरियम का यह आश्चर्य भरा प्रश्न मेरे सामने था।

यह अमेरिकन युवती उस दिन बाबा के यात्री-दल में शामिल हुई थी। प्रार्थना-सभा के उपरान्त उसने मुझसे आग्रह किया कि मैं संक्षेप में उसे बाबा के प्रवचन का सारांश अंग्रेजी में बता दूँ।

बाबा उस दिन प्रार्थना-सभा में विनोद के ही 'मूड' में थे।

लाउड-स्पीकर की व्यवस्था ठीक नहीं बैठ पायी, तो बाबा प्रार्थना-मंच से उतर कर बीच सभा में जा खड़े हुए और टहल-टहल कर भाषण करने लगे :

"इतने लोग यहाँ आये, इससे हमको बड़ी खुशी है। आप लोग यहाँ क्यों आये ? बड़ा यज्ञ शुरू है। क्यों ? इसीलिए कि हिन्दुस्तान के सभी ग़रीब सुखी हों। सब सुखी होंगे, तो ग़रीब भी सुखी होंगे, धनी भी सुखी होंगे। परमेश्वर ने हर घर में बच्चे दिये हैं। भूमिवानों को भी, भूमिहीनों को भी। अमीरों को भी बच्चे हैं, गरीबों को भी। भगवान् हर बच्चे को नंगा पैदा करता है। ग़रीब का बच्चा भी नंगा, अमीर का बच्चा भी नंगा। श्रीकृष्ण को राजा के घर से किसान के घर ला रखा। कोई पहचान नहीं। भगवान् सबको एक ही ढंग से यहाँ भेजता है। ले भी जाता है एक ही ढंग से। अमीर अपनी जागीर लेकर वहाँ नहीं जा सकता। सब छोड़ कर जाना पड़ता है। जैसे आये, वैसे जाना पड़ेगा। ईश्वर की माया है।"

और तब बाबा ने यह कहते हुए कि 'ईश्वर ने सबको एक-सी नाक दी है'—एक लड़के की नाक पकड़ ली !

"ग़रीब को भी एक नाक। अमीर को भी एक नाक। नाक दी, तो हवा भी दी। चाहे जितनी लो।

"हर एक को पानी चाहिए। भगवान् ने सबको पानी दिया।

"हवा का कोई मालिक है ? पानी का कोई मालिक है ? फिर ज़मीन का ही मालिक कोई क्यों हो ?

"हवा सबकी, पानी सबका, ज़मीन भी सबकी।

"ज़मीन न खरीद की चीज़ है, न बिक्री की। वह तो सबकी माँ है। सबको उसकी सेवा का अधिकार है। सबको ज़मीन का अधिकार मिलना चाहिए।"

एक लड़के को खड़ा करके बाबा ने पूछा : "क्यों, सबको मिलना चाहिए न ?"

लड़का बेचारा यह अप्रत्याशित सवाल सुन कर सकपका गया।

बाबा बोले : "पिल्ला (बच्चा) घबरा गया। सोचता होगा, घर पर बाप कहीं डाँट न दे !"

बाबा ने भीड़ में से एक आदमी का छाता ले लिया। उसे ऊपर उठा कर पूछा: "कहाँ से आया यह ?"

फिर एक आदिवासी भाई के सिर पर से पत्तों का बना टोप उतार कर अपने सिर पर लगाते हुए बोले : "पहले हम ऐसा छाता लगाते थे। पर अब तो शहर-वाले तुम्हें लूटते हैं—ऐसा छाता देकर !"

एक लड़के की फटी क़मीज़ पकड़ कर बाबा ने कहा : "हम नहीं चाहते कि कोई ऐसा फटा कपड़ा पहने। पवनार में हमारे आश्रम में चार साल का लड़का अपने कपड़े के लिए पूरा सूत कात लेता है। कुजेन्दो (उड़ीसा) में दस साल के एक लड़के को हमने हाथ से करघे पर बुनते देखा है। तब यह बारह साल का लड़का फटा हुआ और मिल का कपड़ा क्यों पहनें ? क्यों न हाथ से कात कर, बुन कर हम अपना कपड़ा पहनें ? गाँव में बाहर का कपड़ा आने ही न दें। हम निश्चय कर लें—बाहर का कपड़ा हमारे गाँव में नहीं आयेगा, नहीं आयेगा !!"

और यह कहते-कहते बाबा ने उस लड़के की फटी क़मीज़ पूरी-की-पूरी फाड़ दी !

* * *

बाबा को क़मीज़ फाड़ते तो सबने देखा, पर यह बहुत कम लोग देख पाये कि प्रार्थना-सभा से लौटते समय बाबा अपने हाथ की कती-बुनी अपनी चादर भी उस लड़के को ओढ़ा आये।

कृतकृत्य हो उठा वह बालक !

रमा देवी बोलीं : "बाबा हमें दे देते अपनी चादर ! हमसे कहते तो हम उस लड़के को खादी की नयी क़मीज़ बनवा देतीं।"

मालती देवी बोलीं : "मेरी तो साड़ी फटी है। बाबा अपनी चादर मुझे ही दे देते !"

सबको उस लड़के के सौभाग्य से ईर्ष्या हो उठी।

कुर्नूल से आये हुए पत्रकारों ने प्रश्न किया : "बाबा Third Person (तृतीय पुरुष) में क्यों बात करते हैं ? प्रथम पुरुष में क्यों नहीं ?"

बाबा ने जवाब दिया : "तुम्हारा सवाल अच्छा है। बाबा निरहंकार है, इसीसे तृतीय पुरुष में वह बात करता है। चतुर्थ पुरुष होता, तो बाबा उसीमें बात करता।"

हँसी से हम सब लोटपोट हो गये।

बाबा को खूब हँसाती हैं, हम सबको भी।

माता जानकी देवी विनोद की साक्षात् मूर्ति हैं।

एक दिन शाम को टहलने चलीं, तो खेत में जहाँ हम सब गोलाकार बैठ गये, वहाँ उन्होंने अपनी परीक्षा की बात छेड़ दी।

उन्होंने बताया कि कैसे प्रथमा में फेल होने पर उन्होंने मध्यमा का फार्म भरा और उसमें फेल होने पर उत्तमा का !

बाबा बोले : "विश्वविद्यालय थीसिस (शोध-पूर्ण निबंध) देने पर डॉक्टरेट की उपाधि देते हैं। अब तो तुम्हारी पुस्तक छप ही गयी है। उसे भेज दो 'डॉक्टरेट' के लिए !"

माताजी ने अपनी जीवन-यात्रा छपा डाली है। उसीकी चर्चा करते हुए बाबा ने ऐसा कहा। यह वही पुस्तक है, जिसे भेंट करने पर दादा धर्माधिकारी ने कहा था : "इसमें तुमने यह लिखना छोड़ दिया कि जब मेरी अरथी उठेगी, तो बीच रास्ते में मैं उठ कर देखूँगी कि मेरी शव-यात्रा में कौन-कौन शामिल हैं !"

(क्रमशः)

कुछ मूर्तियाँ !

(शांता बहन नारुळकर)

दक्षिण भारत में जब से विनोबा भूदान-यात्रा में घूम रहे हैं, तब से हर जगह देवताओं के दर्शन का लाभ भी हमें मिल रहा है। कांचीपुरम्, पळनी, मदुरा आदि अनेक देवस्थान हमने देखे। हर जगह हमने देखा कि वहाँ एक मूर्ति, जो पत्थर की बनी हुई है, विशालकाय है, स्थिर रूप में खड़ी या बैठी है। वह अपनी जगह बैठी रहती, पर सब लोग उसके दर्शन के लिए दौड़ते।

दूसरी यह उत्साह-मूर्ति ! यह जगह-जगह पर घूमती थी। लोग उसे फूलों से सजा कर घुमाते हैं। लोगों से वह मिलती है और लोग उससे मिलते हैं। घुमाना लोगों के भलाई के लिए तो है ! महाराष्ट्र का रत्नागिरी जिला पत्थरों से भरा है, परंतु नररत्न पैदा करने में उसने महाराष्ट्र और देश की अपूर्व सेवा की है।

वहाँ भी एक ऐसी ही स्थिर मूर्ति है !

एक भूदान-शिविर में जाने का मौका मुझे मिला और मैं कुछ पाने के लिए वहाँ गयी। 'गोपुरी-आश्रम' देखने में बहुत छोटा, पर बहुत गुणी है। उसकी स्थापना भी एक महान् व्यक्ति ने ही की। वह है, स्थिर मूर्ति अप्पासाहब पटवर्धन ! उन्हें देख कर जिसका मस्तक नत न होगा, वह अभागा ही कहा जायगा। सुबह चक्की चलाते, झाड़ू लगाते। सभा में तो मानों मंत्र ही बोलते। पर शवच्छेदन, भंगी-काम, गॅस-प्लॅण्ट का प्रत्यक्ष प्रयोग अंबर-चक्र विद्या का अध्ययन, खेती-बाग-वानी, डेअरी ऐसे हर एक काम के साथ अप्पासाहब होते हुए भी उनका व्यक्तित्व अलग है, ऐसा बार-बार महसूस होता है। उन्हें कुदाली से गड्ढा खोदते देख कर तो आँसू ही टपकने लगते ! क्योंकि सुदामा से कम पतले और कमज़ोर वे न होंगे।

तीसरे गुजरात के रविशंकर महाराज हैं।

भूदान का 'अगला क़दम' मानों इन मूर्तियों के रूप में ही प्रत्यक्ष हो उठा है।

---

www.vinoba.in

तमिलनाड़ की क्रांतियात्रा से—

(निर्मला देशपांडे)

गत सप्ताह में विनोबाजी का यात्रीदल एक आंतरराष्ट्रीय प्रदर्शन-सा बन गया था। जापान, इंग्लैंड, फ्रान्स, इटली, जर्मनी आदि देशों के यात्रियों के विविध वर्ण, वेश आदि गाँववालों के लिए मनोरंजन के साधन बन गये। पीत वस्त्र परिधान किये हुए जापानी भिक्षुओं का 'नम्यो हो रेंगे क्योंऽऽ' का जप सतत सुनायी देता था। गांधीजी के साथ सेवाग्राम में पाँच साल रहे हुए बौद्ध भिक्षु आनंद भाई तथा जापान की भिक्षुणियों की प्रमुख बहन ने विनोबाजी को जापान आने का निमंत्रण दिया और जापान में सत्याग्रह के तंत्र का विकास तथा सर्वोदय-विचार का प्रचार किस तरह किया जा सकता है, इस बारे में चर्चा की। आनंदभाई ने उन विद्यार्थियों की एक सभा में हिंदी में भाषण देते हुए कहा कि "हमारे धर्मग्रंथों में यह लिखा है कि बुद्ध भगवान् के ढाई हजार साल बाद दुनिया में शांति की स्थापना होगी और वह काम भारत के जरिये होगा। भारतवासियों से मैं अनुरोध करता हूँ कि वे अपने इस महान् उत्तरदायित्व को महसूस करें। सारा एशिया आपकी ओर आशा की निगाह से देख रहा है। भूदान-यज्ञ के जरिये विश्वशांति का ही काम हो रहा है।"

जापान के किसानों के प्रमुख नेता कोदामा कामेतारो एक सप्ताह तक यात्रा में रहे। आपके पिताजी जापान के बहुत बड़े जमींदार थे, जिन्होंने दस साल पहले अपनी सारी जमीन, ५०० एकड़ खुद ही मजदूरों में बाँट दी थी। उन्होंने विनोबाजी को 'खेती से ही मानव का सर्वांगीण विकास होगा', इस विचार का एक जापानी वाक्य भी लिख कर भेजा। कोदामाजी ने जापान के किसानों की ओर से विनोबाजी को किसानों के भगवान् की एक मूर्ति भेंट की। दुनिया के गरीबों का बोझ पीठ पर लिये हुए, चावल के दो बोरों पर खड़े होकर मुस्कुराने वाले भगवान् की उस मूर्ति ने विनोबाजी के कमरे में वेदग्रंथों के निकट एक स्थान पा लिया है। कोदामाजी चंद मित्रों के साथ जापानी भाषा में एक साप्ताहिक 'भूमि-पुत्र' (तोचिनोको) भी चलाते रहे हैं। उन्हें वहाँ आठ सौ एकड़ का भूदान (जंगल दान) मिला है, जहाँ पर वे एक आश्रम स्थापित करने वाले हैं, जो सर्वोदय के ढंग पर होगा। कोदामाजी के अनुरोध पर विनोबा ने जापान के किसानों को संदेश देते हुए कहा :

"जापान की किसान-सभा के प्रतिनिधि से बातचीत करने का मौका हमें मिला, इससे बहुत खुशी हुई। इस समय दुनिया को अहिंसा की बहुत अधिक जरूरत है। अगर जापान अहिंसा की शक्ति विकसित करेगा, तो स्वयं बचेगा और दुनिया को भी बचायेगा। भूदान-यज्ञ का संदेश केवल एक देश तक सीमित नहीं है। उसके मूल में जो विचार है, जिसे हम सर्वोदय कहते हैं, सब देशों को लागू होता है। मुझे यह सुनकर खुशी हुई कि जापान में सर्वोदय का विचार लोगों को प्रिय हो रहा है। भगवान् ने जो शक्ति, संपत्ति, बुद्धि आदि हमें दी है, वह हमारे व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं, बल्कि विश्व की सेवा के लिए दी है, यही सर्वोदय विचार का सार है। मुझे विश्वास है, दुनिया कभी-न-कभी इस विचार को ग्रहण करेगी। जापानी बंधुओं को, जो कि सर्वोदय के लिए वहाँ काम कर रहे हैं, मेरा हार्दिक धन्यवाद है। मैं उनके काम को यश चाहता हूँ।"

कोदामाजी ने विनोबाजी से कहा : मुझे यहाँ अनुभव आया कि भूदान आंदोलन से सिर्फ हिन्दुस्तान में ही क्रांति नहीं होगी, बल्कि समस्त एशिया में और दुनिया में जागृति होने वाली है। भूदान की शक्ति का जो नैतिक तरीका है, उसका मुझे बहुत आकर्षण हुआ।

इटली से आये हुए एक लेखक ने सवाल पूछा कि 'मैं अभी इंदौर, देहली, बंबई आदि घूमकर आया, तो मुझे लगा कि क्या गांधी का प्रभाव हिन्दुस्तान में नहीं रहा है ?–विनोबाजी ने जवाब दिया, गांधीजी राजनीतिज्ञ भी थे और संत भी। उन्हींके प्रयत्नों से भारत आजाद हुआ। आपने अबतक जो देखा वह गांधी का राजनीति पर जो प्रभाव है, वह देखा। लेकिन ऐसे महापुरुषों का लोगों के दिलों पर का प्रभाव नापना हो, तो दूरदृष्टि से देखना होता है। बुद्ध भगवान् को हम आज ढाई हजार साल बाद याद कर रहें हैं। गांधीजी जैसे महापुरुष के प्रभाव का पता आज नहीं लग सकता। फिर भी यह कहा जा सकता है कि लाखों लोग जो भूदान दे रहे हैं, वह गांधीजी के प्रभाव का ही प्रतीक है।" उस भाई ने दूसरा सवाल पूछा कि "चीन में राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं है, जैसी कि भारत में है। इस हालत में आपकी राय में किस देश की प्रगति अधिक शीघ्र होगी ? विनोबाजी ने उनसे कहा : "मैं नहीं मानता कि चीन में राजनैतिक स्वतंत्रता नहीं है। जनता के सहयोग के बिना ही वहाँ की सरकार प्रगति कर रही हो, यह मैं नहीं मानता हूँ। वहाँ की सरकार साम्यवादी है, तो वहाँ की जनता भी इस विचार के लिए अनुकूल है। वहाँ जमीन का बटवारा हुआ है, जिसकी अनुभूति वहाँ के लोगों को हो रही है। लेकिन चीनवालों के तरीके दूसरे हैं। हमारे तरीके उनसे भिन्न हैं। मैं मानता हूँ कि हिन्दुस्तान की प्रगति चीन से अधिक अच्छी होगी, चाहे वह कुछ धीरे धीरे हो। आगे चलकर हिंदुस्तान ही आगे बढ़ेगा। चीन अपनी नीति के कारण एक गुट में शामिल हुआ है, जिससे वह अपने लिये दुनिया में विरोध पैदा करता है। किसी भी देश की प्रगति के लिये यह नीति खतरनाक है। भारत के तरीके के कारण उसकी प्रगति अधिक वास्तविक और संघर्षरहित होगी।"

त्रिची जिले में एक ग्रामदान मिला और झरना बहना शुरू हुआ। यहाँ के द्रविड़ कळहम् के वृद्ध नेता श्री रामस्वामी नायकर ने डेढ़ घंटे तक विनोबाजी से बातचीत की। बातचीत खुले दिल से और प्रेम से हुई। श्री नायकरजी का जातिभेदों के निर्मूलन का उत्साह तथा लगन का विनोबाजी के मन पर बहुत अच्छा असर हुआ और उन्होंने कहा कि 'जातिभेदों का निर्मूलन होना ही चाहिये। इस बारे में मैं आप से पूर्णतया सहमत हूँ।' नायकरजी ने भूदानयज्ञ में सहयोग देने की माँग को सहर्ष स्वीकार करते हुए कहा कि विनोबाजी के विचारों के लिए उनके मन में बड़ा प्रेम और आदर है और उनके कई विचार उनके अपने विचारों से मिलते भी हैं।

त्रिची में तमिल के कुछ साहित्यिकों की सभा में विनोबाजी ने कहा— "ग्रामदान से यहाँ की सारी हवा बदल रही है। यह आंदोलन सिर्फ जमीन के बँटवारे का नहीं है, बल्कि कुल जीवन में परिवर्तन करने का है। जहाँ जनता में इस प्रकार का बुनियादी काम करना है, वहाँ साहित्यिकों की मदद अपरिहार्य है। यह देखा गया है कि जब कभी नया जीवन-विचार प्रकट हुआ, उससे साहित्यिकों को नयी स्फूर्ति हुई। जैसे वसंत ऋतु आता है, तो कोकिल बोलने ही लगते हैं, वैसे ही जब नवविचार का वसंत ऋतु आता है, तो साहित्यिकों को भी वाक्स्फूर्ति हो जाती है। परंतु आपसे हम विशेष अपेक्षा रखते हैं कि आप वाक्दान् दें। आप साहित्यिक अपनी वाक्शक्ति के जरिये सर्वोदय-विचार की सेवा करेंगे, तो सर्वोदय-विचार को तो जो बल मिलेगा सो मिलेगा, परंतु उससे साहित्यिकों को नवजीवन प्राप्त होगा। नहीं तो ये साहित्यिक किस आधार से जीयेंगे ? शरीर के पोषण के लिये भी वे कहीं नौकरी वगैरह करते हैं, परंतु उन्हें मानसिक पोषण की जरूरत होती है। वे साहित्यिक राजा-महाराजा, सरकार आदि के आश्रय से रहेंगे, तो जिंदा नहीं रहेंगे। उन्हें प्रतिभा का ही आश्रय लेना चाहिये और प्रतिभा के लिए जीवन का वैसा विचार चाहिये। मालकियत मिटाने और अपनी संपत्ति, बुद्धि, शक्ति समाज की सेवा के लिए देनी है, इस विचार का पोषण साहित्यिकों को मिलेगा, तो उनकी प्रतिभा जाग उठेगी। अक्सर देखा गया है कि महान् साहित्यिक गरीबी में बेफिक्र रह कर आनंद का अनुभव करते थे। इसलिए साहित्यिकों को इस सुखी जीवन की आशा नहीं करनी चाहिये, बल्कि हम तो समझते हैं कि उनका जीवन सुखी बनेगा, तो उन पर सरस्वती प्रसन्न नहीं होगी। हम आपको सुखी रहने नहीं देंगे, इसीलिए तो आपकी थोड़ी-सी आमदनी में से भी हम एक हिस्से का दान माँगते हैं !" आखिरी वाक्य सुनते ही सब हँसने लगे। एक साहित्यिक ने कहा कि लोगों में अच्छे विचार के प्रति आकर्षण नहीं है, इसलिए अखबार ऐसे लेख नहीं छापते। विनोबाजी ने कहा कि आप हमारी भूदान-पत्रिकाओं के पास भेजिये, जिससे कि अखिल भारत में आपकी अच्छी चीजों का प्रकाशन हो सकेगा।

विनोबाजी ने तंजाऊर जिले में प्रवेश किया, तो कावेरी को साक्षी रख कर उन्होंने जनता से कहा, "यहाँ कावेरी है। जमीन भी तरी है, तो दिल भी उदार होना चाहिये। यहाँ खूब ग्रामदान होगा। जनता कल्पवृक्ष है। उससे अपनी कल्पना के अनुसार फल पावोगे। हम दूध की अपेक्षा से गाय की सेवा करते हैं, तो हमें दूध मिलता है और गाय को परमात्मा-स्वरूप समझ कर सेवा करते हैं, तो दूध के साथ चित्तशुद्धि का महान् फल मिलता है। काम वही है, पर भावना के कारण फर्क पड़ जाता है।"

---

www.vinoba.in

नास्तिकता क्यों बढ़ रही है ?

(विनोबा)

मैं मानता हूँ कि नास्तिकता दुनिया में फैली, उसकी ज्यादा जिम्मेवारी आस्तिकों पर है, क्योंकि उनके जीवन में करुणा नहीं दीखती। जब करुणाविहीन मनुष्य आस्तिकता का दावा करता है, तब प्रचार नास्तिकता का होता है। रामानुज को देखकर ही लोगों के हृदय में बदल हो जाता था। इस जमाने ने भी ऐसे महापुरुषों को देखा है—रामकृष्ण परमहंस, महात्मा गाँधी आदि। और भी कई पुरुष हो गये, जिनके संस्पर्श से लोक-हृदय में पवित्र भावना का उदय होता था। सौ साल का हिंदुस्तान का इतिहास देखिये। गाँधीजी ने लोगों पर असर डाला, विवेकानंद ने लोगों पर असर डाला। दयानंद, अरविंद घोष, रविंद्रनाथ टागोर, सुब्रह्मण्य भारतीयार, ऐसे पचासों नाम ले सकते हैं, जिन्होंने लोकहृदय पर प्रभाव डाला। लेकिन देवस्थानों से इन दिनों किसी ने लोगों पर असर डाला है ? कहीं ऐसा उदाहरण होगा, तो मेरे ज्ञान में नहीं है। हम सोचें कि ऐसा क्यों हुआ ? रामानुज का असर क्यों पड़ा ? क्योंकि उसकी कायम की आमदनी नहीं थी। बेचारा मारा-मारा फिरता था। यहाँ राजा ने द्वेष किया, तो म्हैसूर गया। राजा क्यों द्वेष करते थे ? निस्पृहतापूर्वक सत्य बोलने वालों की यही हालत होती थी। राजा को मीठा लगे, वही बोलना। रामानुज ने यह नहीं किया। माणिक्यवाचकर भी तो ? प्रधान मंत्री था। पर उसने देखा, यह निर्जीव जीवन है, इससे समाज को सुधार नहीं सकते। इसलिए उसने पद छोड़ा और बाहर निकल आया। ऐसे पुरुषों का राजा के साथ हमेशा झगड़ा रहता है। गांधीजी का सरकार के साथ झगड़ा था। सरकार का दया के साथ झगड़ा था। महापुरुषों के साथ सरकार का झगड़ा होता था, क्योंकि पुरुष मीठा नहीं बोलते थे, सत्य बोलते थे। लोगों को अपनी बात चुभे तो चुभे, क्योंकि उन्हें समाज-सुधार करना था। उसी काम में वे लगे थे, इसलिए उनकी कायम की आमदनी नहीं थी। आज का आज ही खाते थे। लेकिन जब से मंदिर-मसजिदों के लिए कायम की योजना बनी, तब से यह भक्ति निरुपयोगी बनी। ये स्थान पुराने लोगों के स्मरण पर चलते हैं, परन्तु जो शख्स पुराने पुरुषों की महिमा गाया ही करेगा और स्वयं कुछ नहीं करेगा, उसकी क्या अवस्था होगी ?

ऐसे जो स्थान बने हैं, उनमें जिंदा तपस्या नहीं रही है। झरना बहता रहता है, तो पानी साफ रहता है। झरना बंद हुआ, तो पानी खराब होता है, बदबू आती है। तपस्या रुक जाती है। मतलब धर्म-प्रवाह बहता नहीं है। वहाँ पानी का संचय हो जाता है। इसलिए खाने-पीने की सुव्यवस्था कोई हमारे लिए करें, तो हम कहेंगे, बड़ा भारी अन्याय हुआ है। धर्मकार्य के लिए अत्यंत खतरा है कि कायम के लिए कोई व्यवस्था हो !

धर्म का आधार आत्मा पर होना चाहिये, पैसे पर नहीं। अन्न पर भी नहीं होना चाहिए। इसीलिए हमने कहा कि पुराने जमाने में मंदिर को जमीन देते थे तो ठीक था, परंतु आज इस तरह मंदिर को जमीन देना ठीक नहीं है।

(श्रीरंगम्, त्रिची, १७-१-'५७)

अहिंसा कायरों का नहीं, वीरों का धर्म है !

किसीके प्रति शत्रु-भाव न रखना, किसीका बुरा न चाहना और न अपनी ओर से किसीके प्रतिकूल आचरण करना अहिंसा है; और यह मैत्री और बंधुत्व का मूल है। अणुबम और उदजन बम की विभीषिका से संत्रस्त मानव के लिए यही एकमात्र त्राण है। अहिंसा कायरों का नहीं, वीरों का धर्म है। इसके लिए बहुत बड़े आत्मबल और धीरज की अपेक्षा है। हिंसा और प्रतिशोध के दुर्भाव से अभिशप्त मानवता के लिए यही वह मार्ग है, जो उसे शांति की राह पर ले जा सकता है।...आज के मानव की सबसे बड़ी भूल यह है कि वह और बहुत प्रकार की नयी-नयी बातों को जानने-खोजने और समझने की कोशिश करता है, परंतु वह अपने आपको भूलता जा रहा है। आत्मा अनन्त शक्तियों और सुखों का स्रोत है, जिसे पहचानने की वह ज़रा भी चिंता नहीं करता। ... अणुव्रत-आंदोलन भी यही सिखाता है कि किसीके प्रति आक्रांत मत बनो, निरपराध को मत सताओ, अर्थ-लिप्सा और लोभ के भयावह तूफानों में अपना स्तर न छोड़ो। धन जीवन का साध्य नहीं है। उसके पीछे सत्यनिष्ठा और सदाचरण को मत छोड़ो।

दिल्ली, ५-१-'५७ —आचार्यश्री तुलसी

"दरिद्रनारायण का मन्दिर"

(बाबा राघवदास)

पूज्य बापूजी का चिन्तन का अपना अलग ढंग था। उन्होंने जिस भगवान् का स्मरण अपनी "सेवक की प्रार्थना" में किया है, वह है 'नम्रता के सम्राट्, दीन-हीन-भंगी की कुटिया के निवासी।' समाज में भंगी का स्थान सबसे नीचे माना जाता है। ऐसे हीन-दीन की कुटिया के निवासी भगवान् का स्मरण बापूजी करते थे। सर्वोदय में भी समाज का जो सबसे दुःखी व्यक्ति, कमजोर सदस्य है, उसीका उदय सबसे पहले सोचा जाता है। यही बात बापूजी के चिन्तन में रही है।

आज भूमिदान-यज्ञ में भी आर्थिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से जो हीन हैं, उन्हींका चिन्तन किया जा रहा है। अतः इस यज्ञ का निमन्त्रण घर-घर पहुँचाना जरूरी है। इस यज्ञ के इष्टदेव जिन घरों में रहते हैं, उन पर "दरिद्रनारायणका मन्दिर" लिख देना चाहिए। जिन गरीबों को हमने अब तक अवहेलना की दृष्टि से देखा, वे ही तो आज हमारे इष्टदेव हैं। सदियों से जिनके श्रम और तन-मन तथा धन से समाज ने पूरा लाभ उठाया है, उन्हें साधारण से साधारण सुविधा से भी वंचित रख कर हमने जो पाप की पराकाष्ठा की है, उसीका प्रायश्चित्त हमें इस यज्ञ के द्वारा करना है। इष्टदेव के मन्दिरों की खोज हमें करनी ही होगी।

इसलिए हमारा यह नम्र सुझाव है कि श्रमदान-सप्ताह की तरह "ग्रामपरिवार" सप्ताह भी मनाया जाय और अपने-अपने गाँव में जो गरीब परिवार हैं, उनके पास जाकर उनके बर्तन, कपड़े, मकान तथा भोजन देख कर, जिस घर में सबसे अधिक दारिद्र्य हम पावें, उसका नाम "दरिद्रनारायण नम्बर १" के रूप में लिख लें। फिर क्रम से उनकी हालत के अनुसार नम्बर लिखते जायँ। इस प्रकार गाँव में जो दरिद्र हैं, उनकी जानकारी हमें सहज हो जायगी। हम अपने इष्ट-देवों के मकानों को मामूली घरों में नहीं, बल्कि मन्दिरों के रूप में देख सकेंगे, भीतर के परिवार को देवता-रूप समझ कर करुणा अर्पण करेंगे। इससे हमारी दृष्टि ही बदल जायेगी। आज जिन मन्दिरों में हम जाते हैं, वहाँ भगवान् से बात नहीं कर पाते हैं। उसको भोग भी नहीं लगा सकते। पर हम इस मन्दिर के भगवान् से बात कर सकते हैं, सेवा उसे अर्पण कर सकते हैं, सब कुछ दे सकते हैं। हमारे जीवन में एक सुन्दर परिवर्तन इस कारण हो सकता है। सतत का स्मरण उसके प्रति आत्मभाव जगाये बिना रह नहीं सकता, जब कि वह एक जीवित देवता है !

अपरिग्रह 'कम से कम' नहीं जानता !

प्रश्न—अपरिग्रह की व्याख्या क्या है ?

विनोबा : अपरिग्रह की कोई व्याख्या नहीं है। जनक महाराज पूर्णतः अपरिग्रही थे, यद्यपि वे महल में रहते थे और शुकदेव भी अपरिग्रही थे, जो जंगल में रहते थे। शुक और जनक, दोनों दो सिरे पर खड़े हैं, लेकिन दोनों अपरिग्रही हैं। दूसरी मिसाल देनी हो, तो इधर शंकर भगवान् हैं, उधर विष्णु भगवान्। शंकर भगवान् कमंडलु के साथ अपरिग्रही हैं और विष्णु भगवान् लक्ष्मी के वैभव के साथ अपरिग्रही हैं। अर्थात्, दोनों अपरिग्रही हैं। हम कोई बाहरी चीज़ रखें-न-रखें, ऐसी स्थूल चीज में मैं पड़ना नहीं चाहता। यह तो जाहिर ही है कि भूमि की माँग हो रही है, संपत्तिदान, ग्रामदान हम माँग रहे हैं। उसमें मालकियत मिटाने की बात हो रही है। लोगों के सामने प्रत्यक्ष कार्यक्रम उपस्थित है। तो, जहाँ मालकियत ही छोड़ने की बात हो रही है, वहाँ जो मनुष्य अंतःकरण में अपरिग्रह के लिए प्रेम रखेगा, वह अपना जीवन भी उसी तरह ढालने की कोशिश करेगा। किसी एक भाई ने कहा कि कम-से-कम छठा हिस्सा तो देना ही चाहिए। मैंने कहा कि कम-से-कम क्या देना चाहिए, इसकी हिदायत हम नहीं देते हैं। ज्यादा-से-ज्यादा क्या देना चाहिए, यही हम कहते हैं। फिर क्या करना चाहिए, यह वह सोचेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि उस मनुष्य के मन में हमेशा असमाधान बना रहना चाहिए। अभी मैंने पूरा नहीं दिया है, कुछ देने का बाकी है, ऐसा उसे सतत लगना चाहिए। अगर मैं कह दूँ कि छठा हिस्सा देना चाहिए, तो जिन्होंने छठा हिस्सा दे दिया, वे अपरिग्रहियों में आ गये ! उससे उनको तृप्ति हो जाती है। लेकिन मैं तो उसके मन में असंतोष कायम रखना चाहता हूँ। हमारे मन में उसके लिए संतोष चाहिए, परंतु उसके मन में अपने लिए असंतोष ही चाहिए !

मदुराई, ३१-१२-५६

---

www.vinoba.in

भूक्रांति में ८७ छात्र कूद पड़े !

श्री जयप्रकाशजी का मुजफ्फरपुर में दौरा

ता० २७ जनवरी को जयप्रकाशजी हाजीपुर गये। वहाँ से १६ मील की दूरी पर महुआ थाने में मिर्जानगर नाम का एक गाँव है। उसकी आबादी करीब २००० की है और जमीन एक हजार एकड़ है। वहाँ एक आम सभा हुई, जिसमें उस गाँव के तथा आस-पास के गाँवों के करीब पाँच हजार आदमी हाजिर थे। सभा खतम होने पर मिर्जानगर के प्रमुख ग्रामीणों ने ग्रामदान करने का अपना निश्चय जयप्रकाशजी को बतलाया।

उसी रोज हाजीपुर में सारे सबडिविजन के विद्यार्थियों की सभा हुई। जय-प्रकाशजी के आवाहन पर ३५ विद्यार्थियों ने एक साल तक पढ़ाई छोड़ कर भूदान-क्रांति में काम करने का निश्चय जाहिर किया।

ता० २८ जनवरी को मुजफ्फरपुर शहर का कार्यक्रम रखा गया था। पर वहाँ चुनाव की सरगर्मी थी, इस कारण जयप्रकाशजी का कार्यक्रम समस्तीपुर का कर दिया गया।

वहाँ भी विद्यार्थियों की सभा हुई, जिसमें ५२ विद्यार्थियों ने एक साल का समय भूदान-क्रांति के लिए देने का निश्चय प्रकट किया।

ता० २९ जनवरी को माधोपुर (सीतामढ़ी) में सभा हुई। इस गाँव में १०५ परिवार रहते हैं। १०३ परिवारों ने ग्रामदान का निश्चय प्रकट किया। इन लोगों के पास १५५ बीघा जमीन है। सन्ध्या में सीतामढ़ी शहर में जयप्रकाशजी और आ. कृपालानीजी के ओजस्वी व्याख्यान विद्यार्थियों के बीच हुए।

—ध्वजाप्रसाद साहू

आन्दोलन के बढ़ते चरण

नवादा थाना में भूदान-आंदोलन

ता. १३ व १८ जनवरी को नवादा और कौआकोल (गया) के कार्यकर्ताओं की दो सभाएँ श्री जयप्रकाशजी के मार्गदर्शन में हुईं। निम्न निर्णय लिये गये :

(१) २६ जनवरी से १७ फरवरी तक सामूहिक पदयात्रा। ५६ लोगों ने तुरंत नाम लिखा दिये। आश्रम के १५ कार्यकर्ता भी इसमें शामिल हैं।

(२) १२ फरवरी के लिए दो हजार सूतांजलि इकट्ठी करना।

(३) भूदान की अवितरित ज़मीन और गैरमज़रुआ खास जमीन का भी वितरण ता. १८ अप्रैल तक करना।

(४) २५० नये सहकारी कार्यकर्ता तैयार करना।

(५) सर्वस्वदानियों के सहकारी सर्वोदय-परिवार बनाना। करीब आधे गाँवों में, जहाँ कि दान मिला है, १०-१०, १५-१५ सर्वस्वदानी हैं।

(६) वस्त्रस्वावलंबन आदि का ग्राम-संकल्प तथा श्रमदान से निर्माण-कार्य।

(७) साहित्य-प्रचार, "भूदान-यज्ञ" के ग्राहक बढ़ाना आदि।

जनवरी में दो सभाएँ बहुत बड़ी हुईं। एक श्री विमलाबहन के निमित्त और दूसरी ग्रामराज-सम्मेलन। दूर-दूर से आदिवासी लोग इसमें आये थे।

मध्य-प्रदेश में ग्रामदान

—अमरवाड़ा तहसील में भूदान-सप्ताह की पूर्वतैयारी में हर्रई सर्किल में बीस दिवसीय अखंड पदयात्रा पर श्री विजयभाई और श्री राजेभाई की एक टोली गयी है। १६ दिसंबर को इस टोली को ४६९ एकड़ जमीन और दो ग्रामदान भी मिले हैं, जिनका रकबा क्रमशः ५६४ और ८८१ एकड़ का है।

अमरवाड़ा तहसील के चौरई में १५ से २५ जनवरी तक हाईस्कूल के १०६ छात्र-छात्राओं एवं अध्यापकों का शिविर हुआ। उन्होंने ४१५ गाँवों में प्रचार किया। ११ ग्रामदान मिले, जिसका कुल क्षेत्रफल १०००० एकड़ है। १२००) का गल्ला, अन्य साधनदान और संपत्तिदान भी मिला।

भंडारा तहसील में प्रथम सामूहिक पदयात्रा-सप्ताह ता० १४ से २३ जनवरी तक मनाया गया। ता० १२-१३ को श्री नारायणभाई देसाई तथा श्री मनोहरजी दिवाण के मार्गदर्शन में कार्यकर्ताओं का शिविर हुआ। ३० टोलियों द्वारा २४० गाँवों में संदेश पहुँचाया गया। इस क्षेत्र के प्रथम ग्रामदान का श्रेय 'सुरबोड़ी' गाँव के सज्जनों को मिला। १७८ दानपत्रों द्वारा २६८ एकड़ भूमि प्राप्त हुई। १५००) का वार्षिक संपत्तिदान मिला। १०० गाँवों में "साम्ययोग" के ग्राहक बने। ४७५) का साहित्य-बिक्री हुई।

राजस्थान में ग्रामदान

जोधपुर-जैसलमेर की पदयात्रा १ जनवरी से प्रारंभ हुई। शुरू में ही बीकानेर के मगर तहसील में 'बेदावतों का बरा' का संपूर्ण ग्रामदान प्राप्त हुआ। यह बस्ती लगभग १५ परिवारों की है, जिसका रकबा क़रीब ३० हज़ार बीघा होगा।

सीकर और नागौर जिले की सामूहिक पदयात्रा के बीच क्रमशः श्यामपुरा और धोलपासिया, दो गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए। श्यामपुर नागोर जिले की डाडणूं तहसील में ५० घरों की बस्ती है तथा धोलपासिया सीकर जिले की लक्ष्मणगढ़ तहसील में २५ घरों की बस्ती है।

संवाद-सूचनाएँ :

१२ फरवरी का सूतांजलि-कार्यक्रम इस प्रकार रखा जाय :

प्रातःकाल—प्रभात-फेरी, मेले के क्षेत्र में ४॥ बजे से ६ बजे तक। मेले की भूमि के आसपास तथा किसी विशेष स्थान, भंगी-बस्ती आदि में सफाई का सामूहिक कार्यक्रम रखा जाय। यदि संभव हो, तो अपने साथ लाये हुए भोजन-सामग्री आदि का समूहीकरण और सर्वधर्मी और सर्वजाति के साथ बैठ कर भोजन।

सायंकाल—सूत्रयज्ञ, प्रार्थना और सूतांजलि का विशेष अर्पण।

अ. भा. सर्व-सेवा-संघ, सूतांजलि विभाग —कनु गांधी, संयोजक

---

१२ फरवरी को मध्य-प्रदेश में बड़वानी के पास राजघाट पर मेला लगेगा और १३ फरवरी को खंडवा, खरगोन, झाबुआ और धार जिले की १५ तहसीलों के रचनात्मक कार्यकर्ताओं का सर्वोदय-सम्मेलन होगा। निवास की निःशुल्क और भोजन की सशुल्क व्यवस्था रहेगी।

—संयोजक, सर्वोदय-मेला, राजघाट, बड़वानी (मध्यप्रदेश)

जनता महाविद्यालय, बनकटा स्टेशन, देवरिया (उ० प्र०) के तत्त्वावधान में आयोजित सर्वोदय-मेले में ११-१२ फरवरी को पशु-प्रदर्शनी, सूतयज्ञ, गन्ना-प्रदर्शनी आदि आयोजन होंगे। १२ फरवरी को सर्वोदय-विचार-पद्धति पर व्याख्यान-प्रतियोगिता भी होगी। —संयोजक

प्रकाशन-समाचार

श्री गांधी-आश्रम के नीचे लिखे ३१ भण्डारों को स्वाध्याय-योजना के सदस्य बनाने का अधिकार दिया गया है :

१—अकबरपुर २—बनारस ३—इलाहाबाद ४—लखनऊ ५—आगरा ६—मोपाल ७—जबलपुर ८—दिल्ली ९—नयी दिल्ली १०—गोरखपुर ११—देवरिया १२—मथुरा १३—मेरठ १४—बलिया १५—सहारनपुर १६—मुरादाबाद १७—बिजनौर १८—देहरादून १९—सागर २०—इटावा २१—मैनपुरी २२—अलीगढ़ २३—बदायूं २४—नैनीताल २५—एटा २६—बुलन्दशहर २७—झाँसी २८—बांदा २९—सुल्तानपुर ३०—बरेली और ३१—फरुखाबाद। —अ. भा. सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

विषय-सूची

१.	"सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै !"	विनोबा	१
२.	तालुका-दान के लिए "तिरुमंगलम्" की प्रतिज्ञा !	—	१
३.	मूल्य-परिवर्तन की क्रांति और छात्र : २	जयप्रकाश नारायण	२
४.	"तो फिर कार्यकर्ता क्या करें ?"	दादा धर्माधिकारी	३
५.	सर्वोदय के लिए वोट दीजिये !	सिद्धराज ढड्ढा	३
६.	योजना कैसे बन सकती है ?	विनोबा	४
७.	क्रांतिनिष्ठ तरुणों से—	अण्णासाहब सहस्रबुद्धे	५
८.	खादी-काम का स्वरूप अब कैसा रहे ?	सहमंत्री	५
९.	मनुष्य का विकास कैसे हुआ ?	विनोबा	६
१०.	सर्वोदय की दृष्टि से :		
	१. सत् + आवन = सत्तावन् !	सिद्धराज ढड्ढा	६
११.	अहिंसा कब और कैसे काम करती है ?	गांधीजी	७
१२.	विश्वशान्ति का आधार : ग्रामराज	कन्हैयाभाई	७
१३.	गंभीर प्रतिज्ञा !	दामोदरदास मूंदड़ा	८
१४.	विनोद की घड़ियों में : २.	श्रीकृष्णदत्त भट्ट	९
१५.	कुछ मूर्तियाँ !	शांता बहन नारुळकर	९
१६.	तमिलनाड़ की क्रांतियात्रा से—	निर्मला देशपांडे	१०
१७.	नास्तिकता क्यों बढ़ रही है ?	विनोबा	११
१८.	"दरिद्रनारायण का मन्दिर"	बाबा राघवदास	११
१९.	अपरिग्रह कम-से-कम नहीं जानता	विनोबा	११
२०.	आंदोलन के बढ़ते चरण, सूचनाएँ आदि	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता: पोस्ट बॉक्स नं० ४१, राजघाट, काशी

www.vinoba.in